अंक : १३७
मई २००४
वैशाख-ज्येष्ठ
वि.सं. २०६१
मूल्य : रु. ६-००

ऋषि प्रसाद

हिन्दी
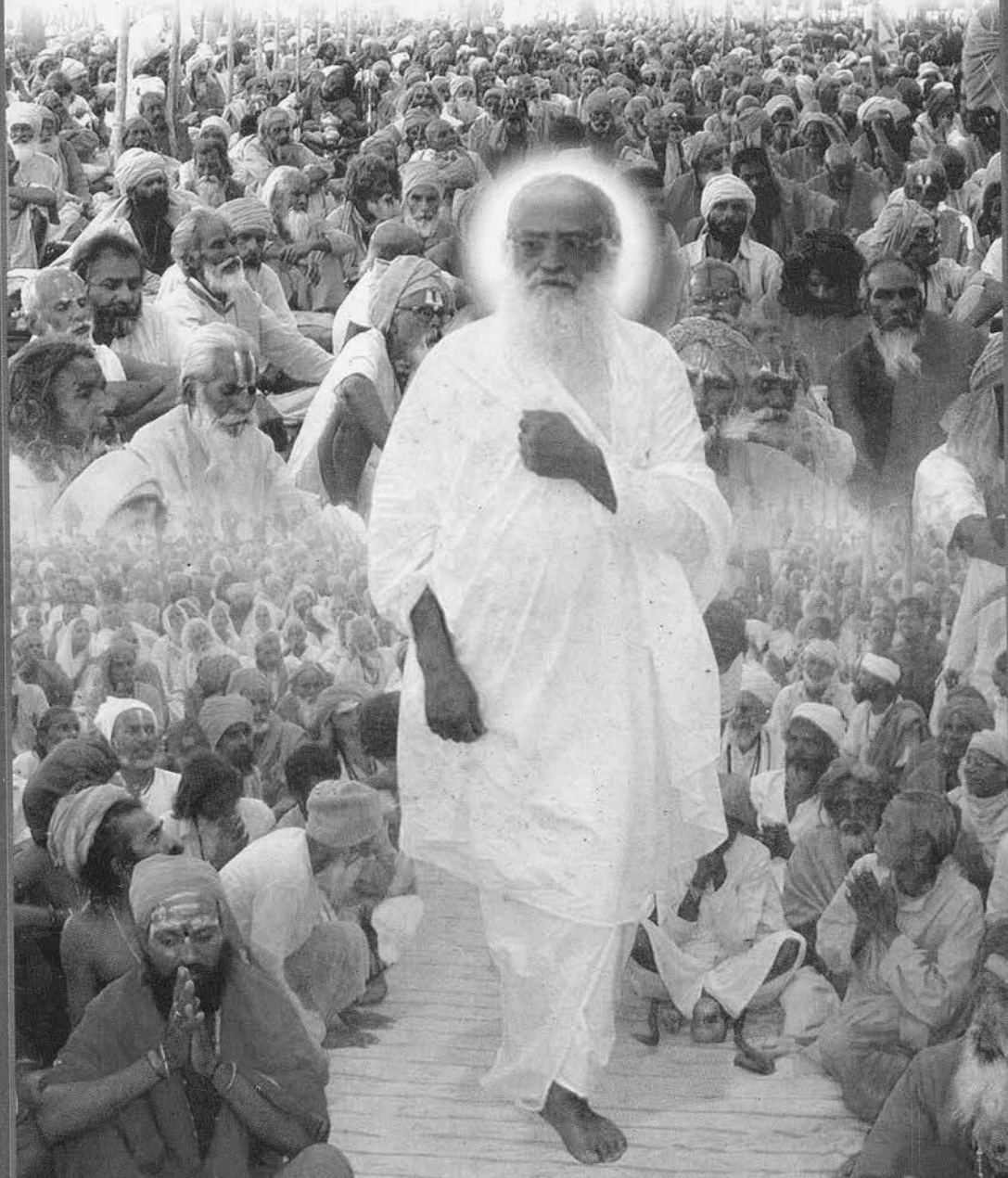
उज्जैन सिंहस्थ कुंभ में उमड़े कोई गिरि, कोई पुरी, कोई वैष्णव तो कोई संन्यासी।
कोई किसी अखाड़े का तो कोई किसी अखाड़े का। वास्तव में सभी भगवान के, सबमें भगवान।
पूज्य बापूजी को निकट पाकर साधु-संत श्रद्धा से भर गये।
सभीने सत्संग सुना, भोजन पाया, पाया प्रभुरस का, प्रभु-साधना का प्रकाश।

पूज्य बापूजी के दर्शन-सत्संग का पावन प्रसाद और मधुर भोजन-प्रसाद पाकर उपस्थित साधु समाज मंत्रमुग्ध हुआ।
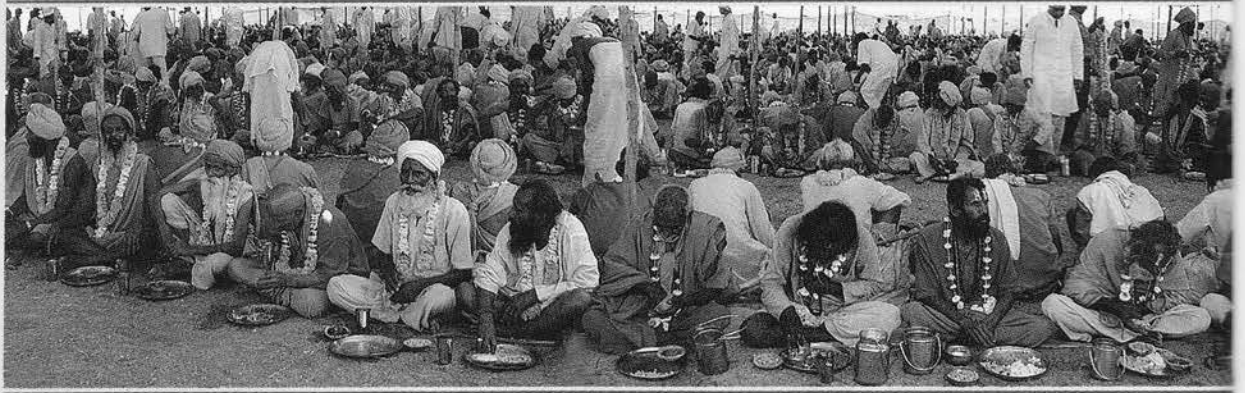
सब ते सेवा धर्म कठोरा।

ऋषि प्रसाद

वर्ष : १४ अंक : १३७
मई २००४ मूल्य : रु. ६-००
वैशाख-ज्येष्ठ, वि.सं.२०६१

सदस्यता शुल्क

भारत में
(१) वार्षिक : रु. ५५/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक: रु. २००/-
(४) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में
(१) वार्षिक : रु.८०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १५०/-
(३) पंचवार्षिक: रु. ३००/-
(४) आजीवन : रु. ७५०/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 20
(२) द्विवार्षिक : US $ 40
(३) पंचवार्षिक: US $ 80
(४) आजीवन : US $ 200

कार्यालय **'ऋषि प्रसाद'** श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site: www.ashram.org

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : कौशिक वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-३८०००५.
मुद्रण स्थल : हार्दिक वेबप्रिंट, राणीप और विनय प्रिंटिंग प्रेस, अमदावाद।
सम्पादक : कौशिक वाणी
सहसम्पादक : प्रे. खो. मकवाणा

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक अथवा सदस्यता क्रमांक अवश्य लिखें।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रम

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग

सोनी चैनल पर 'संत आसाराम वाणी' प्रतिदिन सुबह ७-०० बजे
साधना चैनल पर 'संत श्री आसारामजी बापू की सत्संग-सरिता' रोज रात्रि ९-०० बजे
आस्था चैनल पर 'संत श्री आसारामजी बापू की अमृतवाणी' सुबह ८-०० तथा दोप. २-३० बजे
संस्कार चैनल पर 'परम पूज्य लोकसंत श्री आसारामजी बापू की अमृतवर्षा' रोज दोप. २-०० बजे तथा रात्रि ९-४० बजे

सत्संग-महिमा

सत्संग है इक परम औषधि, मिटे तम अहं उपाधि-व्याधि।
गुरुनाम से हो सहज समाधि, प्रभुप्रेम से भरें दिल के भंडार॥
सत्संग पावन सम गंगा धारा, तन-मन निर्मल अंतर उजियारा।
सुखस्वरूप जागे अति प्यारा, गुरुज्ञान से हो आनंद अपारा॥
सत्संग से जीवभाव का नाश, रामनाम नवनिधि हो पास।
हो परम ज्ञान अंतर उजास, गुरु तत्त्व अनंत है निराकार॥
सत्संग से हो परम कल्याण, भय भेद भरम मिटे अज्ञान।
सम संतोष हो भक्ति निज ज्ञान, सद्गुरु करें सदैव उपकार॥
सत्संग साचा है परम मीत, गूँजे अंतरतम प्रभु के गीत।
अद्भुत स्वर सोऽहं संगीत, हों शील धर्म चित एकाकार॥
सत्संग है जीवन की जान, सुखस्वरूप की हो पहचान।
रहे न लोभ-मोह अभिमान, गुरुनाम हो साक्षी आधार॥
सत्संग से खुले मनमंदिर द्वार, प्रभुप्रीति हो चित्त निर्विकार।
छाये बेखुदी आत्म खुमार, सद्गुरु भवनिधि तारणहार॥
सत्संग से हों दुर्गुण नाश, कटे काल जाल जम पाश।
जगे एक अलख की आस, प्रभु बने सद्गुरु साकार॥
सत्संग से प्रगटे विश्वास, घट-घट में हो ईश निवास।
सार्थक हो क्षण-पल हर स्वास, गुरु-महिमा का अंत न पार॥
सत्संग से जगे विवेक वैराग, आस्था दृढ़ हो ईश अनुराग।
विष-विषयरस का हो त्याग, गुरुनामामृत है सुख सार॥
सत्संग से उपजे भगवद्भाव, मिले सत्य धर्म की राह।
मिटे वासना तृष्णा चाह, सत्संग पावन से हो उद्धार॥
सत्संग से हो प्रभु की याद, हरिनाम से हो दिल आबाद।
रहे नहीं फरियाद विषाद, हरिमय दृष्टि से सर्व से प्यार॥
सत्संग पावन है मोक्षद्वारा, हो उर अंतर ज्ञान उजियारा।
लगे स्वप्नवत् जग सारा, साक्षी सद्गुरु पे जाऊँ बलिहार॥
सत्संग कल्पवृक्ष जीवन का, गुरु-प्रसाद निज-आनंद मन का।
मनमीत है संत सुजन का, सत्संग की महिमा बड़ी अपार॥

- जानकी ए. चंदनानी, अमदावाद.

उज्जयिनी सजी है प्यारी-प्यारी

पौराणिक नगरी उज्जयिनी सजी है प्यारी-प्यारी।
श्रद्धा लेकर आ पहुँचे हैं कोटि-कोटि नर-नारी॥
पृथ्वी पर सर्वोत्तम नगरी अवंतिका कहलाती।
महाकाल शिव आशुतोष के शिप्रा चरण धुलाती॥
भक्तिदायिनी मुक्तिदायिनी मोक्षदायिनी माई।
शिप्रा अवंतिका चामुंडा पुण्य त्रिवेणी भाई॥
मंगलनाथ और सिद्धनाथ के दर्शन की बलिहारी।
श्रद्धा लेकर आ पहुँचे हैं कोटि-कोटि नर-नारी॥
सप्तपुरियों की महिमा न्यारी जिनमें है उज्जयिनी।
धर्म, ज्ञान, दर्शन में आगे अवंतिका मृगनयनी॥
विक्रम की मेधा ने जग को समय गति सिखलायी।
वेदव्यास और कालिदास ने इसकी महिमा गायी॥
चौंसठ योगिनी, भैरवनाथ ने हर ली विपदा भारी।
श्रद्धा लेकर आ पहुँचे हैं कोटि-कोटि नर-नारी॥
सत्संग में गूँज उठे यहाँ 'हरि ॐ' की वाणी।
भजन, प्रवचन, यज्ञ-यजन और साधना बड़ी भारी॥
श्रद्धा लेकर आ पहुँचे हैं कोटि-कोटि नर-नारी।
नित नव रस की वृष्टि यहाँ, अनुपम अकथ कहानी॥

– हरीश दुबे (म.प्र.).

ऋषि प्रसाद

पढ़ने को मुझको मिली, पत्रिका 'ऋषि प्रसाद'।
सुखद शांति मन को मिली, है पढ़ने के बाद॥
है पढ़ने के बाद, सुंदरतम लेख मिले हैं।
पृष्ठ-पृष्ठ पर मानो, सुरभित सुमन खिले हैं॥
'ऋषि प्रसाद' पढ़ो, शुभ शिक्षा हृदय में धारो।
अपना जीवन तपे हुए, सोने की भाँति निखारो॥
आश्रम आसारामजी का, शहर अमदावाद।
दरिया साबरमती का, रखो मित्रवर याद॥
रखो मित्रवर याद, ज्ञान की ज्योति जागे।
रुक नहीं सकता कभी, अंधकार सूरज के आगे॥
भेज सदस्यता शुल्क, 'ऋषि प्रसाद' मँगाना।
पढ़ो पढ़ाओ सारे, विषय विकार मिटाना॥

शुभेच्छु, स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती.

योग में आरूढ़ कैसे हों ?

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते ।
योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते ॥

'योग में आरूढ़ होने की इच्छावाले मननशील पुरुष के लिए योग की प्राप्ति में निष्कामभाव से कर्म करना ही हेतु कहा जाता है और योगारूढ़ हो जाने पर उस योगारूढ़ पुरुष का जो सर्वसंकल्पों का अभाव है, वही कल्याण में हेतु कहा जाता है।'

(गीता : ६.३)

जो योग में आरूढ़ होना चाहता है, उसे निकम्मेपन का तो त्याग कर ही देना चाहिए और शास्त्रानुसार कर्तव्य कर्म करने चाहिए, जिससे वैराग्य उत्पन्न हो । जब तक चित्त में वैराग्य का दीपक नहीं जगा, तब तक जन्म-मृत्यु, जरा-व्याधि, इच्छा-वासना, दीनता-हीनता, राग-द्वेषादि का अंत नहीं होता।

उस अनंत ने करने की, मानने की और जानने की शक्ति तो सबको दे रखी है । किसीमें कम है तो किसीमें ज्यादा लेकिन है सबके अंदर। अतः कर्म करें तो ऐसे करें कि जिसका फल शाश्वत हो। यदि शाश्वत फल नहीं मिलता तो नश्वर फल में ही हमारी सारी करी-कमाई चली जाती है । इतना ही नहीं, जिस शरीर से कर्म करते हैं उस शरीर का भी नाश हो जाता है और कर्म करके जो वस्तुएँ प्राप्त करते हैं उनका भी नाश हो जाता है। नश्वर शरीर और नश्वर वस्तुओं से शाश्वत की प्राप्ति करना - यही बुद्धिमानी है।

योग कर्म में कुशलता लाता है। अतः योग में आरूढ़ होने का प्रयास करना चाहिए।

नौकरी-धंधा करने से जो धन मिलता है उसका सदुपयोग करें । अगर उपयोग करने की कला आ जाय तो कर्म से मिली हुई चीज नश्वर होने पर भी आप शाश्वत के अधिकारी बनने लगेंगे । आधिभौतिक तन और धन का आध्यात्मिकीकरण आपको आत्मानुभूति कराने में सक्षम है।

आपका विवेक निखरता जाय । ज्यों-ज्यों विवेक निखरता जायेगा त्यों-त्यों वैराग्य आता जायेगा। विवेक निखरेगा तो आप महसूस करेंगे कि 'शरीर मैं नहीं हूँ और शरीर मेरा नहीं है।' जब शरीर ही हमारा नहीं है तो शरीर के सम्बन्ध हमारे कैसे हो सकते हैं ?

जिसको 'इदं' बोलते हैं वह 'अहं' नहीं होता अर्थात् जिसको 'यह' बोलते हैं वह 'मैं' नहीं होता। 'यह मेरा हाथ है... यह मेरा पैर है... यह मेरा सिर है... मेरा मन है... मेरी बुद्धि है... मेरी स्मरणशक्ति कमजोर हो गयी है... मेरी स्मरणशक्ति बढ़िया हो गयी है।' 'मेरे' में परिवर्तन होता रहता है लेकिन 'मैं' तो वही-का-वही रहता है। उस 'मैं' का ज्ञान हो जाय तो काम बन जाय...

नानकजी ने बहुत सुंदर बात कही है :

मन तू ज्योति स्वरूप अपना मूल पिछान।

अपने मूल को पहचाने बिना दीनता-हीनता, खिन्नता और नश्वरता का कभी अंत नहीं होता। आप नहीं चाहते कि आप दीन-हीन बने रहें, खिन्न और अशांत बने रहें, दुःखी बने रहें या नष्ट हो जायें क्योंकि आपका वास्तविक स्वरूप इन बुराइयों से परे है।

हम तो चाहते हैं कि आपका शरीर स्वस्थ हो, मन प्रसन्न रहे और बुद्धि में बुद्धिदाता का ज्ञान पाने का सामर्थ्य आ जाय। जीवन की शाम होने से पहले आप अपने जीवनदाता के स्वभाव को पहचानकर सब दुःखों से छूट जायें...

जहाँ दुःख, क्लेश, पीड़ा है वहाँ हमारा तादात्म्य हो जाता है। इसलिए हम दुःखी,

क्लेशयुक्त, पीड़ित हो जाते हैं । हम प्रयत्न तो करते हैं निर्दुःख होने का, प्रयत्न तो करते हैं क्लेशरहित होने का, लेकिन वह प्रयत्न **आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं** अर्थात् योग में आरूढ़ होने की इच्छावाले मननशील पुरुष की नाईं नहीं करते ।

भगवान कहते हैं :

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते ।

आप योग में आरूढ़ होने के लिए कर्म कीजिये । योग में आरूढ़ होने के लिए कर्म करेंगे तो विवेक उत्पन्न होगा । विवेक जगेगा तो वैराग्य आ जायेगा । वैराग्य आने पर थोड़ा कर्मों से समय निकालिये और वह समय साधना में लगाइये ।

वैसे भी साधक को अति परिश्रम अथवा अति काम्यकर्म में अपना समय ज्यादा बरबाद नहीं करना चाहिए। सयम बड़ा कीमती है और हजारों-हजारों जन्मों के संस्कारों को इसी जन्म में मिटाकर शुद्ध संस्कार जगाकर शुद्ध स्वरूप में आना है, परमात्म-तत्त्व में आना है ।

कभी ऐसा मत मानना कि परमात्मा मरने के बाद मिलेगा... परमात्मा सातवें अर्स पर है, गोलोक में है या साकेत लोक में है । परमात्मा तो सर्वत्र, सर्वव्यापक, सर्वसमर्थ और हमारा आत्मा बनकर बैठा है । उसका अनुभव करने के लिए भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि योग में आरूढ़ हो जाओ ।

योग में आरूढ़ होना है तो शुद्ध कर्मों में लगे रहें और अशुद्ध कर्मों से बचें। फिर भी पुराने संस्कार घसीट ले जाते हैं तो आप घसीटे न जायें, संयम और शुद्धता में आप सावधान रहें ।

जो दोष मन-बुद्धि में हैं उन्हें अपने में न मानें । अगर दोषों को आप अपने में मान लोगे तो दोषों को निकालने में बड़ी कठिनाई होगी और सफलता मिले न मिले । दोष मन में हैं, बुद्धि में हैं... ऐसा करके आप उन्हें निकालने का यत्न करेंगे तो दोषों को निकालने में सुविधा रहेगी। दोषों को निकालने का उपदेश देनेवाले और तदनुसार प्रयत्न करनेवाले भी देखे गये हैं किंतु दोष निकलकर गुण आ जाता है तब भी अभिमान आ जाता है कि 'मेरे में यह गुण है ।' अतः अपने में न दोष का चिंतन करें न गुण का, चिंतन करें अपने शुद्ध-बुद्ध स्वरूप का ।

सुनहु तात माया कृत गुन अरु दोष अनेक ।
गुन यह उभय न देखिअहिं देखिअ सो अबिबेक ॥

(श्री रा.मानस, उ.का. : ४१)

दूसरे के गुण-दोष भी नहीं देखने चाहिए । अगर देखना ही है तो दूसरे के गुण देखें, दोष न देखें और जहाँ-जहाँ भी गुण दिखें तो भावना करें कि वह गुण सच्चिदानंद स्वरूप परमात्मा का दैवी गुण है । इस तरह सबमें परमात्मा को निहारकर अपने आत्मदेव में प्रीति जगानी चाहिए ।

माता-पिता की सेवा, ग्राहक की सेवा, सम्बंधियों की सेवा आदि करते समय उसमें थोड़ा प्रेम मिला दीजिये । आपकी सेवा बंदगी हो जायेगी ।

आप कर्म में प्रवृत्त हो रहे हैं तो सुख किस बात का होता है और दुःख किस बात का होता है ? अपने मन के अनुकूल हुआ तो सुख होता है और मन के प्रतिकूल होता है तो दुःख होता है । नश्वर चीजें चली न जायें इस बात का भय होता है । नश्वर शरीर में कुछ गड़बड़ न हो जाय इस बात की चिंता होती है । जब तक अपने आत्मस्वरूप में न जगे, तब तक दुःख, चिंता, भय, शोक आदि का अंत नहीं होता है।

ज्यों-ज्यों आप अपने आत्मा में आयेंगे त्यों-त्यों दुःख, चिंता, भय, शोक का प्रभाव कम होता जायेगा। हानि-लाभ, मान-अपमान, सुख-दुःख आदि की सत्यता की भ्रांति कम होती जायेगी । ज्यों-ज्यों नश्वर की सत्यता क्षीण होती जायेगी, त्यों-त्यों शाश्वत की सत्यता निखरती जायेगी और सच्चिदानंद का आनंद उभरता जायेगा ।

कर्म तो करें लेकिन कर्म के फल में आसक्त न हों । जब सुखद फल में आसक्ति नहीं होगी तो दुःखद फल में चोट भी नहीं लगेगी । इसके लिए कर्म करते समय कर्म में कर्तापन का भाव और कर्मफल की इच्छा हटाते जायें । ऐसा करने से कर्म-काल भी आपके लिए साधना बन जायेगा ।

जब कर्म-काल साधना हो गया तो साधना-

काल में साधना में और भी निखार आ जायेगा। साधना में निखार आने से साध्य में स्थिति होने लगेगी।

चातक मीन पतंग जब पिया बिन नहीं रह पाय।
साध्य को पाये बिना साधक क्यों रह जाय ॥

तुम्हारा साध्य अपना आत्मा-परमात्मा है। पहले अपना लक्ष्य निश्चित कर लेना चाहिए। जैसे - विद्यार्थी कॉलेज में जाने से पूर्व ही अपना लक्ष्य तय कर लेता है कि उसे डॉक्टर बनना है कि वकील या इंजीनियर बनना है ? फिर उसी प्रकार का प्रयत्न करते हैं। इसी प्रकार आप अपना लक्ष्य बना लीजिये कि मुझे दुःख-पीड़ा, दीनता-हीनता चाहिए कि शांति, आनंद, माधुर्य चाहिए ?

यदि दीनता-हीनता आदि चाहिए तो बाहर के सुख लेने के रास्ते लग जाओ तो ये सब भी मिल जायेंगे। यदि शांति, आनंद और माधुर्य चाहिए तो भीतरी सुख पाने के रास्ते, ईश्वर के रास्ते लग जाओ।

कुँवारा सोचता है कि 'शादी हो जाय तो सुखी हो जाऊँ।' शादीवाला सोचता है कि 'बालक हो जाय तो सुखी हो जाऊँ।' निर्धन सोचता है कि 'धन मिल जाय तो सुखी हो जाऊँ।' अरे ! सारी धरती का राज्य मिल जाय फिर भी दुःख, भय, शोक आदि का अंत नहीं होता। स्वर्ग का वैभव मिल जाय फिर भी अंतःकरण के भय का नाश नहीं होता। जब तक पूर्ण परमात्म-सुख नही मिला, तब तक जो भी मिलता है थोड़ी देर के लिए मिलता है। ऐसा करते-करते समय ही खत्म हो जाता है और कुछ हाथ नहीं लगता।

परमात्म-सुख अगर एक बार भी मिल जाय तो फिर कुछ बाकी नहीं रहता। फिर बाहर का सुख मिला तो क्या और नहीं मिला तो क्या ? मान मिला तो क्या अपमान मिला तो क्या ?

इन्द्रोऽपि रंकवत् भासते अन्यस्य का वार्ताः ?

अरे, इंद्र का राज्य भी उसे तुच्छ भासता है तो औरों की तो बात ही क्या है ?

आप केवल एक बार उसे पाकर तो देखो...

*

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

संत समाज के बीच क्यों ?

किसीने एक बाबाजी से पूछा : ''जिसको शांति की जरूरत हो वह घर-बार छोड़कर गिरि-गुफाओं में संतों के पास जाकर शांति पा सकता है। फिर संतों को एकांत छोड़कर लोकसंग्रह करते हुए समाज में इतना घूमने की क्या जरूरत है ?''

बाबाजी : ''भाई ! अगर आप बीमार हों तो क्या करोगे ?''

''हम बीमार होंगे तो डॉक्टर के पास जायेंगे।''

''यदि बहुत बीमार होने के कारण लाचार होकर स्वयं नहीं जा पाओगे तो क्या करोगे ?''

''डॉक्टर को अस्पताल छोड़कर हमारे पास आना पड़ेगा।''

''ऐसे ही पहले समाज का मन इतना बीमार नहीं था कि केवल संसार की दलदल में ही पड़ा रहे। पहले के लोग घर-बार छोड़कर, विरक्त होकर गुरुओं की शरण में जाते थे। राजे-महाराजे तक राज-पाट छोड़ गुरुओं के द्वार पर जाते और अपना जीवन धन्य बनाते थे।

अभी तो लोग विषय-विकारों में इतना खप जाते हैं कि उन्हें यह विचार ही नहीं आता कि मनुष्य-जन्म आत्मोद्धार के लिए मिला है, सारे बंधनों से मुक्त होने के लिए व सारे विकारों से ऊपर उठने के लिए मिला है। इसलिए आत्मरामी संत गिरि-गुफाएँ छोड़कर दयावश समाज के बीच आते हैं। फिर उनके नाम पर और भी कुछ चल जाता है।''

नासमझी से होते हैं झगड़े...

एक पहुँचे हुए बाबा थे। वे बाजार से गुजर रहे थे। किसीने पूछा : ''बाबाजी ! संसार में लोग इतने दुःखी क्यों हैं ? आपस में झगड़ते क्यों हैं ?''

''लोग नासमझी से दुःखी हैं।''

''कैसे ?''

''प्रत्यक्ष देखना चाहते हो ?''

''हाँ, बाबाजी !''

तभी एक शहदवाला वहाँ से गुजर रहा था। बाबा ने उससे कहा : 'भैया ! इधर तो आना। एक उँगली पर लगे इतना शहद चाहिए।'

बाबा ने उँगली पर शहद लगाया और पास की दीवार पर उससे लकीर कर दी। शहद लगते ही उस पर जीव-जंतुओं की भीड़ इकट्ठी हो गयी। उनको देखकर छिपकली आ गयी। छिपकली को देखकर कुत्ता पूँछ हिलाने लगा। इतने में पास के दुकानवाले ने कुत्ते को डंडा दे मारा। जिसका कुत्ता था वह दुकानवाले पर बरस पड़ा कि 'तेरे बाप को क्यों मारा ?'

दुकानदार : ''मेरा बाप नहीं, तेरा बाप है। इसीलिए तो तू इसे दिन-रात खिलाता है।''

''तेरा बाप।''

''नहीं, तेरा बाप।''

दोनों आपस में मारामारी पर उतर आये। दो गुट बनकर भिड़ गये। हो गया हंगामा ! लग गयी १४४ की कलम !

बात तो कुछ भी नहीं थी किंतु हो गया झगड़ा ! इसी नासमझी के कारण लोग दुःखी रहते हैं।

इसी प्रकार कोई कह दे कि 'धर्म के नाम पर झगड़े होते हैं।' तो मैं इस बात से कतई सहमत नहीं हूँ। धर्म के कारण झगड़े नहीं होते, झगड़े स्वार्थ के कारण, नासमझी के कारण ही होते हैं। यदि केवल धर्म के कारण ही झगड़े होते तो जिन देशों में एक ही धर्म के लोग हैं वहाँ लोग क्यों झगड़ते हैं ? एक ही घर के लोग एक ही धर्म का पालन करते हैं फिर बाप-बेटे, भाई-भाई, पति-पत्नी आदि आपस में क्यों झगड़ते हैं ? एक ही धर्म के दो पड़ोसी क्यों झगड़ते हैं ?

जिसको अपना स्वार्थ सिद्ध करना है वह चाहे धर्म के नाम पर अपना स्वार्थ सिद्ध करे, चाहे किसी आपत्ति को लेकर स्वार्थ सिद्ध करे... ऐसे लोग धर्म के नाम पर भोले-भाले लोगों को लड़ा-भिड़ाकर अपनी खिचड़ी पकाते रहते हैं और नासमझ लोग झगड़ों के शिकार होते रहते हैं।

एक महात्मा से किसीने पूछा : ''महाराज ! मुसलमान बोलते हैं कि 'खुदाताला हिन्दुओं को नहीं मिलता, वे काफिर हैं।' हिन्दू बोलते हैं कि 'भगवान हिन्दुओं को ही मिलता है। मुसलमान लोग झगड़ेबाज हैं।' आप ही बतायें, महाराज ! खुदाताला हिन्दू को मिलता है कि मुसलमान को ?''

महात्मा ने कहा : ''अभी शाम हो गयी है, कल आना।''

दूसरे दिन वह व्यक्ति अपने नौकर के साथ आया। महात्मा ने उसके नौकर को रुपये के दो सिक्के देते हुए कहा :

''इन दो रुपयों की रेजगारी ले आओ।''

नौकर रेजगारी लेने गया तो एक रुपये की रेजगारी मिली और एक रुपया ज्यों-का-त्यों वापस मिला। सेठ ने नौकर से पूछा : ''एक रुपया चल गया और दूसरा नहीं चला, ऐसा क्यों ?''

''हुजूर ! एक रुपया सच्चा था, वह तो चल गया लेकिन दूसरा खोटा था इसलिए नहीं चला।''

महात्मा ने कहा : ''ऐसे ही हिन्दू और मुसलमान - दोनों एक ही परमात्मा के खजाने के दो रुपये हैं। किंतु जो खरा होता है वह चल पड़ता है और जो खोटा होता है वह नहीं चलता। अर्थात् जिसके मन में खोट है उसको भगवान नहीं मिलते और जिसके मन में सत्य है वह चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, यदि सच्चाई से भगवान को पाने के रास्ते पर चलता है तो उसको भगवान अवश्य मिलते हैं।''

*

पाशवी एवं उन्नत अवस्थाएँ

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

कुछ कार्य ऐसे होते हैं, जिन्हें हम जानबूझकर करते हैं - तब हमारी चेतन अवस्था होती है । कुछ कार्य ऐसे होते हैं, जिन्हें हम सहज प्रवृत्तिवश करते हैं - तब हमारी पाशवी या जड़ अवस्था होती है ।

'मैं देख रहा हूँ... बोल रहा हूँ...' इसका मुझे पता है । 'मैं श्वास ले रहा हूँ...' इसका भी मुझे पता है । आत्मा है अकर्ता और शरीर है जड़ । फिर यह कहना कि 'मैं कर रहा हूँ...' इसका तात्पर्य क्या है ? 'मैं' से तात्पर्य यहाँ 'अहं' से है । कुछ कार्य तो अहंपूर्वक होते हैं । जैसे - खाना-पीना, लेना-देना आदि । कुछ कार्यों का पता अहं को नहीं होता फिर भी कार्य होते रहते हैं । जैसे - खून का संचार होना, अन्न का रस बनना, बालों का बढ़ना आदि । ये कार्य वैसे ही होते रहते हैं जैसे पशु के शरीर के कार्य । पशु को कर्तापने का पता नहीं होता फिर भी उसकी चेष्टाएँ होती रहती हैं ।

ऐसे ही निम्न अवस्था में भी हमारी चेष्टाएँ होती रहती हैं । जैसे रात्रि में हम सो जाते हैं तब भी अन्न का पाचन, श्वास का चलना तथा और भी क्रियाएँ होती रहती हैं, फिर भी हमें ऐसा नहीं लगता कि हम कुछ कर रहे हैं । ...तो यह है निम्न अवस्था, पाशवी अवस्था ।

इस प्रकार कुछ कार्य पाशवी अवस्था में और कुछ कर्ताभाव से होते हैं । पाशवी अवस्था में जो कार्य संपन्न होते हैं, उनमें कर्तापन नहीं होता और निर्विकल्प समाधि की अवस्था में जो घटित होता है, उसमें भी कर्तापन नहीं होता ।

निम्नतम अवस्था में, पाशवी अवस्था में कर्तापन नहीं रहता । गाय कहाँ कर्ता होकर कुछ काम करती है ? शेर कहाँ कर्ता होकर काम करता है ? नन्हे-मूढ़ बच्चे भी कहाँ कर्ता होकर कार्य करते हैं ? तो क्या वे मुक्त हो गये हैं ?

शास्त्र व संत कहते हैं कि 'कर्तापन छोड़ो तो भगवान मिलें ।' लेकिन जिनमें कर्तापन होता ही नहीं, उन बच्चों को, पशुओं को कहाँ भगवान मिले हैं ? अतः मानना पड़ेगा कि कर्तापन छोड़ने का जो संकेत है, वह उन्नत अवस्था में कर्तापन छोड़ने के लिए है । उन्नत अवस्था में, समाधि की अवस्था में जब कर्तापन का विलय होता है, तब मनुष्य परम पद को पाता है ।

मनुष्य सोकर उठता है यानी पाशवी अवस्था से उठता है अथवा समाधि से उठता है, इन दोनों स्थितियों में क्या अंतर होता है ? नींद एवं समाधि - दोनों में ही कर्तापन का अभाव होता है । मनुष्य जैसी वासनाओं एवं अल्प मति से युक्त होकर सोता है, वैसी ही वासनाओं एवं अल्प मति से युक्त होकर उठेगा । लेकिन समाधि से उठता है तो जैसा समाधि के पहले था, वैसा नहीं उठेगा, कुछ उन्नत होकर उठेगा । उससे कुछ रचनात्मक कार्य होंगे, कुछ मन की आनंदमय अवस्था, बुद्धि के विकास की, अंदर के जगत की, दिव्य ज्ञान की कुछ खबरें उसके द्वारा बाहर आयेंगी ।

मानव-जाति के लिए जो कुछ हितकर है, शुभ है, मंगलकारी है - उसको जिन्होंने खोजा है उन्हें अवतार कहो, प्रभु कहो, बुद्ध कहो, भगवान कहो, संत कहो, ऋषि या मुनि कहो, वे सब पाशवी अवस्था एवं कर्तापन से ऊपर ऋषि-पद में पहुँचे हुए महापुरुष थे । तभी वे कुछ सुखद समाचार ला पाये कि मानव को मानव की भलाई करनी चाहिए, आपस में स्नेह का व्यवहार करना चाहिए आदि आदि ।

ऋषि-मुनि पाशवी वृत्ति में नहीं, कर्तापन के अहंकार में नहीं, वरन् दोनों से ऊपर समाधि की दशा में, ध्यान की दशा में पहुँचे हैं, तब कहीं उन्हें

दिव्य ज्ञान, दिव्य जीवन, दिव्य रस, दिव्य गंभीरता एवं दिव्य आकर्षणी शक्ति की प्राप्ति हुई है।

अजब राज है ये मोहब्बत के फसाने का,
जिसको जितना आता है उतना ही गाये चला जाता है।

पूरा तो कोई बयान ही नहीं कर सकता। जितने अंश में मनुष्य निर्विकार होता जाता है, उतने अंश में वह समाधिस्थ होता जाता है।

समाधि का मतलब क्या ? समाधि माने चित्त में समाधान होता जाय... विषयों के प्रति आकर्षण कम होता जाय... अतः साधक का नैतिक कर्तव्य है कि वह समाधान करना सीखे।

जगत की 'तू-तू, मैं-मैं' की, खींचातानी की बात आये तो मन को समाधान में ले जाओ। जगत कैसा है ? देखनेवाले की जब, जैसी निगाहें होती हैं वैसा ही जगत उसे दिखता है। जैसे चूहे के जीवन की घटनाएँ मनुष्य के जीवन पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकतीं, चूहे के विचार मनुष्य को कोई विघ्न नहीं पहुँचा सकते, ऐसे ही मनुष्य के विचार ब्रह्म की दुनिया में कोई खलल नहीं पहुँचा सकते। 'अहं' में बैठकर किये गये विचार ब्रह्म में कोई बाधा नहीं डाल सकते। जैसे कीड़े-मकोड़े असंख्य हों फिर भी आपकी नजरों में उनके विचार और उनका जगत नहीं के बराबर है, ऐसे ही ब्रह्मभाव के आगे मानुषी जगत है।

शादी-विवाह के बाद पति-पत्नी एक-दूसरे से मेल करके चलते हैं, एक-दूसरे के स्वभाव को सँभालते हैं तब गृहस्थी की गाड़ी अच्छी तरह से चलती है। ऐसे ही जीव अपने ब्रह्मस्वभाव को सँभालता चले तो उसकी संसार की गाड़ी भी बढ़िया चलती है और साधना की गाड़ी भी बढ़िया चलती है। किंतु जीव अगर अपने ब्रह्मस्वभाव को भूल जाता है तो उसकी संसार की गाड़ी में भी गड़बड़ हो जाती है और साधना की गाड़ी में भी व्यवधान आ जाता है। इसलिए अगर आप संसार में ही उन्नत होना चाहते हैं तो भी आपका जीवन वेदांती होना चाहिए।

अगर आप तंदुरुस्त रहना चाहते हैं तो वेदांत कहता है हमसे सीख लो। यदि आप प्रसिद्ध होना चाहते हैं तो वेदांत कहता है ये लो। अगर आप निर्दुःख जीवन जीना चाहते हैं तो वेदांत बोलता है कि हमारी युक्ति जरा समझ लो। अगर आप सब धर्मों के रहस्य जानना चाहते हैं तो वेदांत कहता है इधर आ जाओ। मूल की बात समझ लो, फिर पत्ते-डालियाँ आदि सबका सार आपको बता देंगे। ...और यह तभी संभव है जब जीव पाशवी अवस्था को त्यागकर उन्नत अवस्था में, चेतन अवस्था में जाने के लिए प्रयत्नशील हो।

सात्त्विक आहार, सात्त्विक जप और कार्यों में साक्षीभाव की सजगतावाले साधक बाजी आसानी से जीत लेते हैं।

गो-समुदाय की रक्षा का मंत्र

'ॐ नमो भगवते त्र्यम्बकायोपशमयोपशमय चुलु चुलु मिलि मिलि भिदि भिदि गोमानिनि चक्रिणि हूँ फट्॥ अस्मिन्ग्रामे गोकुलस्य रक्षां कुरु शान्तिं कुरु कुरु कुरु ठ ठ ठ॥' (अग्नि पुराण : ३०२.२१-३०)

प्रार्थना : 'घंटाकर्ण महासेन वीर बड़े बलवान कहे गये हैं। वे जगदीश्वर महामारी का नाश करनेवाले हैं, अतः मेरी रक्षा करें।'

उपरोक्त मंत्र व यह प्रार्थना गायों की रक्षा करनेवाली है। अतः यदि इसको लिखकर घर या गौशाला के द्वार आदि पर टाँग दिया जाय तो गायों की रक्षा होती है। उनकी बीमारी, महामारी, अपमृत्यु आदि दूर होती है।

दिव्य ज्ञान, दिव्य जीवन, दिव्य रस, दिव्य गंभीरता एवं दिव्य आकर्षणी शक्ति की प्राप्ति हुई है ।

अजब राज है ये मोहब्बत के फसाने का,
जिसको जितना आता है उतना ही गाये चला जाता है ।

पूरा तो कोई बयान ही नहीं कर सकता । जितने अंश में मनुष्य निर्विकार होता जाता है, उतने अंश में वह समाधिस्थ होता जाता है ।

समाधि का मतलब क्या ? समाधि माने चित्त में समाधान होता जाय... विषयों के प्रति आकर्षण कम होता जाय... अतः साधक का नैतिक कर्तव्य है कि वह समाधान करना सीखे ।

जगत की 'तू-तू, मैं-मैं' की, खींचातानी की बात आये तो मन को समाधान में ले जाओ । जगत कैसा है ? देखनेवाले की जब, जैसी निगाहें होती हैं वैसा ही जगत उसे दिखता है । जैसे चूहे के जीवन की घटनाएँ मनुष्य के जीवन पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकतीं, चूहे के विचार मनुष्य को कोई विघ्न नहीं पहुँचा सकते, ऐसे ही मनुष्य के विचार ब्रह्म की दुनिया में कोई खलल नहीं पहुँचा सकते । 'अहं' में बैठकर किये गये विचार ब्रह्म में कोई बाधा नहीं डाल सकते । जैसे कीड़े-मकोड़े असंख्य हों फिर भी आपकी नजरों में उनके विचार और उनका जगत नहीं के बराबर है, ऐसे ही ब्रह्मभाव के आगे मानुषी जगत है ।

शादी-विवाह के बाद पति-पत्नी एक-दूसरे से मेल करके चलते हैं, एक-दूसरे के स्वभाव को सँभालते हैं तब गृहस्थी की गाड़ी अच्छी तरह से चलती है । ऐसे ही जीव अपने ब्रह्मस्वभाव को सँभालता चले तो उसकी संसार की गाड़ी भी बढ़िया चलती है और साधना की गाड़ी भी बढ़िया चलती है । किंतु जीव अगर अपने ब्रह्मस्वभाव को भूल जाता है तो उसकी संसार की गाड़ी में भी गड़बड़ हो जाती है और साधना की गाड़ी में भी व्यवधान आ जाता है । इसलिए अगर आप संसार में ही उन्नत होना चाहते हैं तो भी आपका जीवन वेदांती होना चाहिए ।

अगर आप तंदुरुस्त रहना चाहते हैं तो वेदांत कहता है हमसे सीख लो । यदि आप प्रसिद्ध होना चाहते हैं तो वेदांत कहता है ये लो । अगर आप निर्दुःख जीवन जीना चाहते हैं तो वेदांत बोलता है कि हमारी युक्ति जरा समझ लो । अगर आप सब धर्मों के रहस्य जानना चाहते हैं तो वेदांत कहता है इधर आ जाओ । मूल की बात समझ लो, फिर पत्ते-डालियाँ आदि सबका सार आपको बता देंगे । ...और यह तभी संभव है जब जीव पाशवी अवस्था को त्यागकर उन्नत अवस्था में, चेतन अवस्था में जाने के लिए प्रयत्नशील हो ।

सात्त्विक आहार, सात्त्विक जप और कार्यों में साक्षीभाव की सजगतावाले साधक बाजी आसानी से जीत लेते हैं ।

गो-समुदाय की रक्षा का मंत्र

'ॐ नमो भगवते त्र्यम्बकायोपशमयोपशमय चुलु चुलु मिलि मिलि भिदि भिदि गोमानिनि चक्रिणि हूँ फट् ॥ अस्मिन्ग्रामे गोकुलस्य रक्षां कुरु शान्तिं कुरु कुरु कुरु ठ ठ ठ ॥' (अग्नि पुराण : ३०२.२१-३०)

प्रार्थना : 'घंटाकर्ण महासेन वीर बड़े बलवान कहे गये हैं । वे जगदीश्वर महामारी का नाश करनेवाले हैं, अतः मेरी रक्षा करें ।'

उपरोक्त मंत्र व यह प्रार्थना गायों की रक्षा करनेवाली है । अतः यदि इसको लिखकर घर या गौशाला के द्वार आदि पर टाँग दिया जाय तो गायों की रक्षा होती है । उनकी बीमारी, महामारी, अपमृत्यु आदि दूर होती है ।

सविशेष और निर्विशेष ज्ञान

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

ईश्वर ने ज्ञान की रचना नहीं की है। यदि कोई कहे : 'ईश्वर ने ज्ञान की रचना की है।' तो ईश्वर के पहले ज्ञान नहीं था क्या ? वे अज्ञानी थे क्या ? नहीं। ईश्वर के पहले ज्ञानसत्ता थी और ज्ञान में जो टिके हैं वे ईश्वर हैं।

एक होता है **निर्विशेष** शाश्वत ज्ञान और दूसरा होता है **सविशेष** सापेक्ष ज्ञान। सविशेष सापेक्ष ज्ञान तो अदल-बदल होता रहता है लेकिन निर्विशेष ज्ञान ज्यों-का-त्यों रहता है। उस ज्ञान का जन्म नहीं होता और उसकी मृत्यु भी नहीं होती। वही ज्ञान ब्रह्म है और वही ज्ञान परमात्मा है। वही ज्ञान ईश्वरों का ईश्वर है।

'बापूजी ! सविशेष और निर्विशेष क्या होता है ?'

जैसे - सूर्य की किरणें चारों तरफ फैली रहती हैं, सूर्य का प्रकाश चारों ओर व्याप्त रहता है, किंतु दर्पण के द्वारा परावर्तित प्रकाश इधर-उधर हिलता हुआ दिखता है। जो प्रकाश दर्पण के द्वारा इधर-उधर हिलता हुआ दिखता है वह सविशेष है। महाकाश निर्विशेष है किंतु मठ अथवा घट में आया हुआ मठाकाश या घटाकाश सविशेष है। ऐसे ही परब्रह्म परमात्म-सत्ता का ज्ञान निर्विशेष ब्रह्म है और सविशेष ज्ञान माया है, स्फुरणा है। **निष्फुर ब्रह्म है और फुरना माया है।**

'श्रीरामचरितमानस' में आता है :

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना ।
सत हरि भजनु जगत सब सपना ॥

हरिभजन का मतलब यह नहीं है कि सारा दिन करताल लेकर ढोल-मँजीरे कूटते रहे या बाँग देते रहे। हरिभजन का मतलब है निर्विशेष ज्ञान में टिकना। इस निर्विशेष ज्ञान में जो टिक जाता है उसके लिए सारा जगत स्वप्नवत् हो जाता है।

जो इसी जन्म में मुक्ति पाना चाहता है उसको तीन घंटे प्रणव का जप, तीन घंटे ध्यान, तीन घंटे शास्त्र-विचार और तीन घंटे गुरुसेवा करनी चाहिए। तत्परता हो तो काम बन जाय। समय बरबाद न करें, इधर-उधर की बातें न सुनें, केवल ईश्वरप्राप्ति का यत्न करें। भूखे आदमी को सब काम करते हुए भी भोजन की याद कैसे बनी रहती है, खूब प्यास लगी हो तो पानी कैसे याद आता है, ऐसे ही परमात्मा को पाने की तड़प होनी चाहिए। फिर ईश्वर को पाने में कोई देर नहीं है...

यदि ७२ घंटे भी ईश्वर के लिए सच्ची तड़प जगे तो ईश्वर-साक्षात्कार हो जाय। ७२ घंटे बहुत हो गये। किंतु गंदी आदतें, पुरानी आदतें मिटाने के लिए साधन-भजन करना होता है।

ईश्वर मिलना कठिन नहीं है किंतु बेईमानी और बुरी आदतें छोड़ना कठिन हो रहा है। आरोग्य लाना नहीं होता, बीमारी मिटानी होती है। चादर की सफेदी लानी नहीं होती, केवल मैल हटाना होता है। धरती में पानी लाना नहीं होता, केवल मिट्टी और कंकड़ हटाने होते हैं। ऐसे ही चंचलता और बुरा आकर्षण हटाओ, बेईमानी हटाओ तो ईश्वर-ही-ईश्वर है।

सेवाधारियों व सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनी ऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जायेगी।

चौदहवें अध्याय का माहात्म्य

श्रीमहादेवजी कहते हैं : पार्वती ! मैं तुम्हें भव-बंधन से छुटकारा पाने के साधनभूत चौदहवें अध्याय का माहात्म्य बतलाता हूँ, तुम ध्यान देकर सुनो। सिंहल द्वीप में विक्रम बैताल नामक एक राजा थे, जो सिंह के समान पराक्रमी और कलाओं के भंडार थे। एक दिन वे शिकार खेलने के लिए उत्सुक होकर राजकुमारोंसहित दो कुतियों को साथ लिये वन में गये। वहाँ पहुँचने पर उन्होंने तीव्र गति से भागते हुए खरगोश के पीछे अपनी कुतिया छोड़ दी। उस समय सब प्राणियों के देखते-देखते खरगोश इस प्रकार भागने लगा मानों, उड़ रहा हो। दौड़ते-दौड़ते बहुत थक जाने के कारण वह एक बड़ी खंदक (गहरे गड्ढे) में गिर पड़ा। गिरने पर भी वह कुतिया के हाथ नहीं आया और उस स्थान पर जा पहुँचा, जहाँ का वातावरण बहुत ही शांत था। वहाँ हिरन निर्भय होकर सब ओर वृक्षों की छाया में बैठे रहते थे। बंदर भी अपने-आप टूटकर गिरे हुए नारियल के फलों और पके हुए आमों से पूर्ण तृप्त रहते थे। वहाँ सिंह हाथी के बच्चों के साथ खेलते और साँप निडर होकर मोर की पाँखों में घुस जाते थे। उस स्थान पर एक आश्रम के भीतर वत्स नामक मुनि रहते थे, जो जितेन्द्रिय और शांत-भाव से निरंतर गीता के चौदहवें अध्याय का पाठ किया करते थे। आश्रम के पास ही वत्स मुनि के किसी शिष्य ने अपने पैर धोये थे, (ये भी चौदहवें अध्याय का पाठ किया करते थे।) इससे वहाँ की मिट्टी गीली हो गयी थी। खरगोश का जीवन कुछ शेष था। वह हाँफता हुआ आकर उसी कीचड़ में गिर पड़ा। उसके स्पर्शमात्र से ही खरगोश दिव्य विमान पर बैठकर स्वर्गलोक को चला गया, फिर कुतिया भी उसका पीछा करती हुई आयी। वहाँ उसके शरीर पर भी कीचड़ के कुछ छींटें लग गये, फिर भूख-प्यास की पीड़ा से रहित हो कुतिया का रूप त्यागकर उसने दिव्यांगना का रमणीय रूप धारण कर लिया तथा गंधर्वों से सुशोभित दिव्य विमान पर आरूढ़ हो वह भी स्वर्गलोक को चली गयी। यह देख मुनि के मेधावी शिष्य स्वकंधर हँसने लगे। उन दोनों के पूर्वजन्म के वैर का कारण सोचकर उन्हें बड़ा विस्मय हुआ था। उस समय राजा के नेत्र भी आश्चर्य से चकित हो उठे। उन्होंने बड़ी भक्ति के साथ प्रणाम करके पूछा :

''विप्रवर ! नीच योनि में पड़े हुए दोनों प्राणी - कुतिया और खरगोश ज्ञानहीन होते हुए भी जो स्वर्ग में चले गये - इसका क्या कारण है ? इसकी कथा सुनाइये।''

शिष्य ने कहा : ''भूपाल ! इस वन में वत्स नामक ब्राह्मण रहते हैं। वे बड़े जितेन्द्रिय महात्मा हैं। गीता के चौदहवें अध्याय का सदा जप किया करते हैं। मैं उन्हींका शिष्य हूँ, मैंने भी ब्रह्मविद्या में विशेषज्ञता प्राप्त की है। गुरुजी की ही भाँति मैं भी चौदहवें अध्याय का प्रतिदिन जप करता हूँ। मेरे पैर धोने पर गिरे जल में लोटने के कारण यह खरगोश कुतिया के साथ ही स्वर्गलोक को प्राप्त हुआ है। अब मैं अपने हँसने का कारण बताता हूँ।

महाराष्ट्र में प्रत्युदक नामक महान नगर में केशव नामक एक ब्राह्मण रहता था, जो कपटी मनुष्यों में अग्रगण्य था। उसकी स्त्री का नाम विलोभना था। वह स्वच्छंद विहार करनेवाली थी। इससे क्रोध में आकर जन्मभर के वैर को याद करके ब्राह्मण ने अपनी स्त्री का वध कर डाला और उसी पाप से उसको खरगोश की योनि में जन्म मिला। ब्राह्मणी भी अपने पाप के कारण कुतिया बनी।''

श्रीमहादेवजी कहते हैं : यह सारी कथा सुनकर श्रद्धालु राजा ने गीता के चौदहवें अध्याय का पाठ आरम्भ कर दिया। उससे उन्हें परम गति की प्राप्ति हुई। *('पद्म पुराण' से)*

श्रीमद्भगवद्गीता के १४वें अध्याय के कुछ श्लोक

सत्त्वं सुखे संजयति रजः कर्मणि भारत।
ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे संजयत्युत ॥

हे अर्जुन ! सत्त्वगुण सुख में लगाता है और रजोगुण कर्म में तथा तमोगुण तो ज्ञान को ढककर प्रमाद में भी लगाता है। (९)

सत्त्वात्संजायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च।
प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च ॥

सत्त्वगुण से ज्ञान उत्पन्न होता है और रजोगुण से निस्संदेह लोभ तथा तमोगुण से प्रमाद और मोह उत्पन्न होते हैं एवं अज्ञान भी होता है। (१७)

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः ॥

सत्त्वगुण में स्थित पुरुष स्वर्गादि उच्च लोकों को जाते हैं, रजोगुण में स्थित राजस पुरुष मध्य में अर्थात् मनुष्यलोक में ही रहते हैं और तमोगुण के कार्यरूप निद्रा, प्रमाद और आलस्यादि में स्थित तामस पुरुष अधोगति को अर्थात् कीट, पशु आदि नीच योनियों को तथा नरकों को प्राप्त होते हैं। (१८)

नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टानुपश्यति।
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति ॥

जिस समय द्रष्टा तीनों गुणों के अतिरिक्त अन्य किसीको कर्ता नहीं देखता और तीनों गुणों से अत्यंत परे सच्चिदानंदघनस्वरूप मुझ परमात्मा को तत्त्व से जानता है, उस समय वह मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है। (१९)

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥

जो पुरुष अव्यभिचारी भक्तियोग के द्वारा मुझको निरंतर भजता है, वह भी तीनों गुणों (सत्त्व, रज और तम) को भलीभाँति लाँघकर सच्चिदानंदघन ब्रह्म को प्राप्त होने के लिए योग्य बन जाता है। (२६)

ईश्वरप्राप्ति कठिन नहीं है

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

'श्री योगवाशिष्ठ महारामायण' में आता है कि **'ईश्वर हमसे दूर नहीं है, उसमें और हममें कुछ भेद भी नहीं है तथा वह दुर्लभ भी नहीं है।'**

ईश्वर को पाना कठिन नहीं है लेकिन उसका ज्ञान सुनने-विचारने को नहीं मिलता, उसमें प्रीति नहीं होती इसलिए उसे पाना कठिन लगता है। जैसे जिसको लिखने-पढ़ने का अभ्यास नहीं है उसे लिखना-पढ़ना कठिन लगता है, ऐसे ही मन को ईश्वर-विषयक अभ्यास नहीं है अतः ईश्वरप्राप्ति कठिन लगती है। यदि मन को ईश्वर-विषयक अभ्यास हो जाय तो ईश्वरप्राप्ति कठिन नहीं है। जैसे स्कूल के प्रारंभिक दिनों में क... ख... ग... A... B... C... 1... 2... 3... आदि लिखना कठिन लगता था लेकिन अब बड़ी सरलता से लिख लेते हो, ऐसे ही ईश्वर के विषय में है। अभ्यास की बलिहारी है !

दिल-ए-तस्वीर है यार !
जबकि गर्दन झुका ली और मुलाकात कर ली।

'मेरे भाई ने मुझे थप्पड़ मार दिया...' - याद आया तो दुःख हो रहा है। अब दुःख किसको हो रहा है, इसको देखो। दुःख होता है मन को। आप मन के भी द्रष्टा हो जाओ तो दुःख गायब हो जायेगा। शरीर बीमार है, 'ऊँह... ऊँह...' करता है। उसको भी देखो तो हँसी आ जायेगी। एक बार इस शरीर को फाल्सी पेरम मलेरिया और इंजेक्शनों के रिएक्शन से भयंकर पीड़ा का एहसास हो रहा था तो मुँह से 'ऊँह... ऊँह... ऊँह...' निकल जाता था। मैं अपने शरीर को पूछता : 'ऊँह... ऊँह... क्या करता है ?' तो हँसी

आ जाती थी। मैं फिर मन से कहता : 'तू कराहता रह। मैं देखता हूँ।' तो फिर वह कराहता नहीं था। देखनेवालों को बेचारों को बड़ी पीड़ा होती थी, छुपकर रोते थे कि 'न जाने क्या हो गया है...' लेकिन हमको ऐसा नहीं होता था। शरीर को तो पीड़ा होती थी लेकिन हम उसे देखते थे। ऐसे ही अभ्यास हो जाय तो गहरी नींद में भी उसको देखनेवाला द्रष्टा अपने को शरीर से पृथक् महसूस करता है। जैसे हम दूसरे व्यक्ति को देखते हैं, ऐसे ही अपनी नींद में अपने को भी देख सकते हैं। सूक्ष्मता का अभ्यास बढ़ने से ऐसा होता है।

ऐसे ही हम दुःख को भी देख सकते हैं और सुख को भी। देखने का अभ्यास हो तो यह आसान हो जाता है। जैसे नाटक में अभिनेता कहता है : 'मैं राजा विक्रमादित्य हूँ... मेरे राज्य में ऐसा नहीं चल सकता...' लेकिन भीतर से जानता है कि वह कौन है। वही अभिनेता थोड़ी ही देर में भिखारी का वेश धारण कर दर्शकों को द्रवित कर देता है। थोड़ी देर पहले उसने राजाधिराज की भूमिका अदा की थी और अब भिखमंगे की भूमिका अदा कर रहा है, लेकिन भीतर से वह अच्छी तरह से जानता है कि वह केवल भूमिका अदा कर रहा है। ऐसे ही जिसको शरीर से पृथक्त्व का अभ्यास हो जाता है, वह सुख-दुःख से पार हो जाता है।

इसमें झूठा-बेईमान-कपटी आदमी सफल नहीं होता। वह जितना छल-कपट छोड़ेगा उतना ही आगे बढ़ेगा, जितनी बेईमानी छोड़ेगा उतना ही आगे बढ़ेगा। झूठ-कपट-बेईमानी-दगाबाजी होती है देह को 'मैं' मानकर एवं संसार को सत्य मानकर सुखी होने की बेवकूफी से। कितना भी बेईमान व्यक्ति हो, किंतु यदि आत्मा को 'मैं' माने एवं संसार को मिथ्या जाने तो उसकी बेईमानी व दुर्गुण घटते जायेंगे और वह महान बन जायेगा।

जब तक भगवान को पाने की महत्ता का पता नहीं, तभी तक सारे दुःख विद्यमान रहते हैं। ईश्वर को पाने की महिमा नहीं जानते, ईश्वर ही सार है - ऐसा नहीं जानते, तभी तक छल-कपट आदि सारे दुर्गुण विद्यमान रहते हैं। सत्संग की और भगवान को पाने की महत्ता समझ में आ जाय तो मन पवित्र होने लगता है, सारे छल-कपट कम होने लगते हैं, सारी शिकायतें दूर होने लगती हैं। फिर व्यक्ति अपनी गलती की सफाई नहीं देगा वरन् उसे अपनी गलती खटकेगी एवं गलती को निकालने में तत्पर बनेगा। जिसको ईश्वरप्राप्ति की रुचि नहीं है उसको उसकी गलती बताओगे तो सफाई देगा, अपनी गलती नहीं मानेगा और ज्यों-ज्यों सफाई देगा त्यों-त्यों उसकी गलती गहरी उतरती जायेगी। उसको पता ही नहीं चलेगा कि 'मैं अपने ही पैर पर कुल्हाड़ी मार रहा हूँ।'

जो गलती की सफाई देगा, चतुराई करेगा, कपट करेगा उसके जीवन में फिर सच्ची उन्नति नहीं हो सकेगी। जो औरों को धोखा देता है उसको भी कोई-न-कोई बड़ा धोखा दे देता है। दगा किसीका सगा नहीं। झूठ-छल-कपट... इसीसे सारे दुष्कर्म उत्पन्न होते हैं और यह सब होता है शरीर एवं संसार को सत्य मानने से। संसार को सत्य मानना, संसार की चर्चा करना, आत्मा-परमात्मा से प्रीति नहीं करना - यही सारे दुःखों का मूल है।

जो केवल परमात्मा को ही सत्य मानकर उसे पाने का यत्न करता है, उसके लिए ईश्वरप्राप्ति सरल है। जो भगवान की प्रीति, भगवान की प्रसन्नता एवं भगवत्स्वरूप के ज्ञान के लिए ईमानदारी से सेवा करता है, उसके लिए भगवत्प्राप्ति सहज है। ऐसा साधक शीघ्र ही परम पद को पाकर समस्त दुःखों से मुक्त हो जाता है तथा परम सुखस्वरूप अपने आत्मा-परमात्मा में प्रीति और तृप्ति का अनुभव करता है।

महत्त्वपूर्ण निवेदन

सदस्यों के डाक-पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य १३९वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया मई २००४ के अंत तक अपना नया पता भेज दें।

तीन दोषों से बचें...

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

काम करते समय तीन दोष आते हैं, तीन प्रकार की गलतियाँ होती हैं इसलिए हमारा कार्य बंदगी नहीं हो पाता, नहीं तो कार्य भी बंदगी बन जाय।

श्रीरामचंद्रजी के और कोई उपास्य देव नहीं थे, उनके उपास्य देव प्रजा ही थी। 'प्रजा कैसे सुखी हो, प्रजा का कल्याण कैसे हो ?' - इसीका चिंतन श्रीरामचंद्रजी किया करते थे। वे न तो ब्रह्म की उपासना करते थे, न किसी अवतार की और न ही किसी देवी-देवता की... वे तो यही भजन करते थे कि 'मेरी प्रजा की उन्नति कैसे हो, उसका कल्याण कैसे हो ?' प्रजा को भोग की वस्तुएँ देकर उसे विलासी बनाना - यह कोई प्रजा की उन्नति करने का लक्षण नहीं है, यह तो प्रजा का सत्यानाश करना है। प्रजा को आत्मिक सुख की ओर ले जाकर स्वावलंबी बनाना, यही प्रजा की सच्ची उन्नति करने का लक्षण है।

कार्य करते समय तीन बातें हमको अड़चन करती हैं :

(१) हम जो कार्य करते हैं, उसमें अपना पूरा मन नहीं लगाते। क्यों ? क्योंकि फल की आकांक्षा रहती है। फल की आकांक्षा रखने से कार्य में हमारी पूरी क्षमता नहीं लग पाती। फलतः कार्य करने का आनंद नहीं आता, नहीं तो कार्य स्वयं आनंद देता है। कार्य चाहे कोई भी हो, घर में बुहारी का हो या दफ्तर का अथवा कोई व्यापार-धंधा हो... उसे अगर हम मन लगाकर करते हैं तो कर्तृत्वभाव थोड़ा भूल जाते हैं और हमें आनंद आने लगता है।

(२) दूसरी गलती है - आलस्य। 'अभी नहीं बाद में करेंगे...' इसका नाम है आलस्य। आलस्य मनुष्य का महान शत्रु है।

आलस्यो हि मनुष्याणां शरीरस्थो महारिपुः।

कहा भी गया है :

आलस कबहुँ न कीजिये, आलस अरि सम जानि।
आलस ते विद्या घटे, बल बुद्धि की हानि॥

६ घंटे से अधिक सोना, दिन में सोना, काम में सावधानी न रखना, आवश्यक कार्य में विलंब करना आदि सब आलस्य ही है। इन सबसे हानि ही होती है। अतः सावधान !

आलस्य को जीतना हो तो निष्काम कर्म करने चाहिए। सेवा से आलस्य दूर होगा व धीरे-धीरे साधना में भी मन लगेगा। प्राणायाम और आसन भी आलस्य को दूर करने में सहायक हैं।

(३) तीसरी गलती है - संशय। 'ऐसा क्यों, ऐसा क्यों नहीं...' इसका नाम है संशय। गीता में भी कहा गया है : **संशयात्मा विनश्यति।** जहाँ संशय होता है वहाँ विनाश हुआ समझो। संदेहयुक्त होकर कार्य करने से कार्य में सफलता नहीं मिलती। अतः संशय का त्याग करें।

फल की आकांक्षा, आलस्य और संशय - इन तीन गलतियों के कारण हमारे कर्म, कर्मयोग नहीं बनते। अगर ये तीन गलतियाँ हममें से निकल जायें तो हमारे कर्म कर्मयोग बन जायें, हमारा जीवन उज्ज्वल हो जाय। यह जरूरी नहीं कि सब लोग भक्त बन जायें, सभी भगवान को चाहें। नहीं, सब लोग भगवान को भले न चाहें लेकिन जो कुछ चाहते हैं वह सब भगवान ही हैं। आप क्या चाहते हो ? सुख। ...और सुखस्वरूप तो केवल भगवान ही हैं।

जब मानव आलस्य, संशय एवं फलाकांक्षा से रहित होकर कर्म करता है, तब उसका कर्म निष्काम कर्मयोग हो जाता है और वही निष्काम कर्मयोग उसे सुखस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति कराने में सहायक हो जाता है। भोग, आदत, अभ्यास, मान्यता आदि के सुख से पार जाने की कला जब आ जाती है, तब मनुष्य स्वयं ही सुखस्वरूप हो जाता है।

यह कैसी धर्मनिरपेक्षता !

सेक्युलरवाद के नाम पर कुछ राज्य सरकारें हिन्दुओं का विरोध करने की होड़ कर रही हैं । केरल, पश्चिम बंगाल, कर्नाटक आदि राज्यों में व्यवस्था बनाने के नाम पर मंदिरों की सम्पत्ति व कोष पर कब्जा कर लिया गया है । मंदिरों में जो चढ़ावा आता है उसका उपयोग मंदिरों में ही होना चाहिए, जबकि वह सरकारी खजाने में चला जाता है । फिर वहाँ से मदरसों को, हज-अनुदान के रूप में तथा चर्चों में बाँट दिया जाता है । कर्नाटक सरकार के वित्त-विभाग की रिपोर्ट सेक्युलर बिरादरी के दुर्भाव को स्पष्ट करती है और यह दुर्भाव एक षड्यंत्र जैसा प्रतीत होता है । रिपोर्ट में दर्शाया गया है कि वर्ष १९९९-२००० में राज्य के २,६२,०३८ मंदिरों से कर्नाटक सरकार को ६९ करोड़ ९६ लाख रुपये का चढ़ावा प्राप्त हुआ । इस राशि के पाँचवें भाग से भी कम १३ करोड़ ७५ लाख रुपये मंदिरों के रख-रखाव पर खर्च किये गये । शेष राशि में से ३५ करोड़ रुपये मदरसों को व १३ करोड़ २१ लाख रुपये हज यात्रियों को अनुदान के रूप में तथा ८ करोड़ रुपये चर्चों के विकास के लिए दे दिये गये । मंदिरों से प्राप्त चढ़ावे को मदरसों और चर्चों में बाँटने में आगे किस प्रकार लगातार वृद्धि होती रही, यह नीचे दी गयी सारणी से स्पष्ट है ।

उक्त सारणी से स्पष्ट है कि मंदिरों से मिले धन में मंदिरों का हिस्सा लगातार कम होता जा रहा है (और वह हिस्सा भी नाममात्र का है) तथा मंदिरों के इस चढ़ावे को मदरसों और चर्चों को खुले हाथों दिया जा रहा है । क्या इसीको धर्मनिरपेक्षता कहते हैं ?

यदि कभी कोई राज्य सरकार मदरसों और चर्चों के धन को किसी अन्य जगह खर्च करके दिखाये तो मीडिया सारे विश्व में हड़कम्प मचा देगी । तथाकथित धर्मनिरपेक्षतावादी धरने देने लगेंगे, रैलियाँ निकालेंगे, अनशन करेंगे । फिर आज मीडिया क्यों चुप है ? क्यों सहिष्णु हिन्दुओं का शोषण किया जा रहा है ?

(संदर्भ : पाथेय कण, जयपुर, अक्टू. ०३ व हिन्दू वॉइस, मुंबई, जन. ०४)

वर्ष	मंदिरों का चढ़ावा	मदरसों को	चर्चों को	मंदिरों को
२०००-०१	७१ करोड ६ लाख	४५ करोड़ ३४ लाख	१० करोड	११ करोड़ ५० लाख
२००१-०२	७२ करोड़	५० करोड़	१० करोड	१० करोड़
२००२-०३	७९ करोड़	५८ करोड़	१२ करोड़ ७५ लाख	७ करोड़ १० लाख

सबसे अधिक हिन्दू सैनिक क्यों बचे ?

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान अफ्रीका के सहारा मरुस्थल में खाद्य आपूर्ति बंद हो जाने के कारण मित्रराष्ट्रों की सेनाओं को तीन दिन तक अन्न-जल कुछ भी प्राप्त नहीं हो सका। चारों ओर सुनसान रेगिस्तान तथा धूल-कंकड़ों के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं देता था । रेगिस्तान पार करते-करते कुल ७०० सैनिकों की उस टुकड़ी में से मात्र २१० व्यक्ति ही जीवित बच पाये । बाकी सभी भूख-प्यास के कारण रास्ते में ही मर गये ।

इन जीवित सैनिकों में से ८० प्रतिशत अर्थात् १६८ सैनिक हिन्दू थे । इस आश्चर्यजनक घटना का जब विश्लेषण किया गया तो विशेषज्ञों ने यह निष्कर्ष निकाला कि **'वे निश्चय ही ऐसे पूर्वजों की संतानें थीं जिनके रक्त में तप, तितिक्षा, उपवास एवं संयम का प्रभाव रहा होगा । वे अवश्य ही श्रद्धापूर्वक कठिन व्रतों का पालन करते रहे होंगे ।'** ('यौवन सुरक्षा-२' से)

संत कबीर

[संत कबीर जयंती : ३ जून]

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

काशी के राजा वीरदेव सिंह बघेल ने एक बहुत सुंदर महल बनवाया था। सब लोग उस महल की बड़ी प्रशंसा करते थे।

राजा वीरदेव सिंह ने कबीरजी की बड़ी महिमा सुन रखी थी। उसकी तीव्र इच्छा थी कि एक बार कबीरजी उस महल में पधारें। उसने कबीरजी से बहुत आग्रह करके उन्हें महल में आने के लिए राजी कर लिया।

कबीरजी महल देखकर लौट रहे थे तब राजा ने पूछा : ''महाराज ! महल कैसा लगा ?''

राजा चाहता था कि कबीरजी भी प्रशंसा के पुल बाँधें। किंतु कबीरजी ने कहा : ''इस महल में दो बड़े भारी दुर्गुण हैं।''

राजा : ''मैं काशीनरेश हूँ। मेरे महल में दो दुर्गुण ?''

राजा के अहंकार को धक्का लगा कि सब लोग जिस महल की खूब प्रशंसा करते हैं उसीमें दो बड़े दुर्गुण हैं !

काशीनरेश : ''महाराज ! कौन-से दो दुर्गुण हैं ? मैं उन्हें तुरंत ठीक करवा दूँगा।''

''तुम ठीक नहीं करवा सकते।''

कबीरजी ने बताना नहीं चाहा किंतु राजा ने हठ पकड़ लिया। आखिर कबीरजी ने कहा : ''महल बड़े परिश्रम से बना है किंतु इसमें पहला दुर्गुण यह है कि यह बनवानेवाले के साथ नहीं जायेगा, बनवानेवाला इसमें सदा रह नहीं पायेगा और दूसरा दुर्गुण यह है कि समय पाकर यह खँडहर हो जायेगा।''

राजा को तो मानों, थप्पड़ लग गया। उसे बड़ा दुःख हुआ, उसके अहंकार को चोट लगी किंतु उसे कबीरजी की कृपा और दर्शन-सत्संग के प्रभाव से सत्य समझ में आ गया कि 'बात तो सच्ची है। न सदा मैं रह पाऊँगा, न ही यह महल मेरे साथ चल पायेगा और काल के प्रवाह में यह खँडहर भी हो जायेगा !'

वह कबीरजी के चरणों में गिर पड़ा और सदा के लिए उनका भक्त बन गया।

कबीरजी ने अपने अंतिम समय में घोषणा की कि 'इस शरीर का कार्य पूर्ण हो गया है। अब यह चोला छोड़ने के लिए हम मगहर में जायेंगे।'

यह सुनकर वीरदेव सिंह कबीरजी के पास आया और बोला :

''महाराज ! मैंने संकल्प किया था कि राजकाज के आकर्षण से हटकर जीवन के उत्तरार्ध में आपकी चाकरी करूँगा, आपसे आध्यात्मिक प्रसाद पाऊँगा। अपने हाथ से आपकी कुटिया बुहारूँगा। आपके लिए गंगाजल भरकर लाऊँगा। अपने हाथों से आटा गूँधकर आपश्री के लिए भोजन बनाऊँगा और आपके चरणों में रहकर उस परम सत्य की, परमेश्वर की यात्रा करूँगा। किंतु आप मगहर जाकर चोला छोड़ने की बात कर रहे हैं।''

कबीरजी : ''अब समय बीत गया है, काशीनरेश !''

गंगा का जल बह गया तो बह गया... आपने डुबकी मार ली तो मार ली। दुबारा आप वही जल प्राप्त नहीं कर सकते। ऐसे ही महापुरुष का सान्निध्य और समय मिला तो मिला, उसका लाभ ले लिया तो ले लिया, नहीं तो पछताने के सिवाय कुछ हाथ नहीं आता।

कबीरजी के मगहर जाकर देह छोड़ने की बात सुनकर लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि लोग देह छोड़ने के लिए काशी में आते हैं और कबीरजी काशी छोड़कर मगहर में जाने की बात कर रहे हैं !

लोगों की धारणा है कि काशी में देह छोड़ने से मुक्ति मिलती है और मगहर में देह छोड़ने से नरक में जाते हैं । भगवद्भक्ति की महिमा को प्रकट करने के लिए कबीरजी ने लोकमान्यताओं को ठुकराकर मगहर में देह छोड़ने का निर्णय किया ।

मगहर जाने की घोषणा सुनकर कई पंडितों तथा मुल्ला-मौलवियों ने कबीरजी को घेर लिया और कहा :

''जीवनभर तो आपने लोगों को खरी सुनायी :

पाहन पूजे हरि मिलै, तो मैं पूजूँ पहार।
ता तें तो चक्की भली, पीसि खाय संसार ॥
काँकर पाथर जोरि के, मसजिद लई चुनाय ।
ता चढ़ि मुल्ला बाँग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय ॥

जीवनभर आपने हमारी बातें काटी हैं । उसका फल भुगतने के लिए कहीं आपको नरक में न जाना पड़े, इसलिए आप काशी में ही रहें और यहीं प्राण त्यागें ताकि आपकी सद्गति हो ।''

कबीरजी ने कहा : ''ना, ना । काशी में रहूँ तो सद्गति होगी और मगहर में रहूँगा तो दुर्गति होगी, ऐसी बात नहीं है । सभी स्थान मेरे भगवान के हैं । भगवान की भक्ति का माहात्म्य ज्यादा है । हम कहीं भी मरें तो क्या है ?

मनहु कठोर मरै बानारसि, नरकु न बांचिआ जाई।
हरि का संतु मरै हाड़ंबै, त सगली सैन तराई ॥

जो मन का कठोर है, क्रूर है, जिसकी भगवान में प्रीति नहीं है वह काशी में मरे तो भी क्या नरक से बचेगा ? और जिसका मन भगवान में है वह मगहर में मरेगा तो क्या गधा बनेगा ? वह तो अपने कुटुंबियों और शिष्यों को भी तारकर भगवान के साथ मिला देगा ।

कवनु नरकु किआ सुरगु बिचारा संतन दोऊ रादे ।
हम काहू की काणि न कढते अपने गुर परसादे ।
अब तउ जाइ चढे सिंघासनि मिले है सारिंगपानी ।
राम कबीरा एक भये हैं कोइ न सकै पछानी ॥

हम नरक-स्वर्ग की, काशी-मगहर की चिंता नहीं करते क्योंकि हमको तो गुरु की प्रसादी मिल गयी है । अब हम जहाँ भी रहेंगे, वहाँ हमारे साथ हमारे प्रभु हैं ।''

मगहर को दो कलंक लगे थे :

(१) जो मगहर में मरेगा वह अगले जन्म में गधा बनेगा ।

(२) यहाँ पानी की बड़ी तंगी रहेगी ।

मगहर के कलंक धोने के लिए कबीरजी ने सन् १५१८ में मगहर के लिए प्रयाण किया । कहते हैं कि वहाँ की आमी नदी जो केवल बरसात में ही बहती थी, कबीरजी के वहाँ रहने के बाद बारहों महीने बहने लगी !

मगहर में एक दिन सुबह कबीरजी ने सबको दर्शन देते हुए कहा :

''संसार स्वप्न है । सुख में डूबना नहीं और दुःख से घबराना नहीं । यह शरीर तो आत्मा का चोला है, इसे एक दिन छोड़ना ही है । आज मेरा चोला छोड़ने का दिन है । आप लोग दुःखी मत होना ।

संत मरे क्या रोइये जाय अपने घर ।

जैसे घड़े का आकाश महाकाश से मिलता है, ऐसे संत का आत्मा परमात्मा से मिलता है । अब आप लोग रोना-चीखना नहीं और कमरे के भीतर कोई प्रवेश मत करना । खबरदार किसीने दरवाजा खटखटाया तो... !''

कबीरजी कमरे में चले गये । धरती में छोटी-सी गुफा जैसा कमरा है । हम देखकर भी आये हैं । कबीरजी परमेश्वर का चिंतन करते-करते सौम्यभाव से लेट गये । 'सोऽहं' स्वरूप में एकाकार होते-होते उन्होंने अपनी नश्वर देह छोड़ दी ।

भक्तों को इंतजार करते-करते दोपहर हो गयी । आखिर कुछ भक्तों ने साहस करके भीतर प्रवेश किया तो देखा कि कबीरजी के चेहरे पर बड़ी शांति छायी हुई है किंतु शरीर हिलडुल नहीं रहा । अब तो हिन्दू भी रोने लगे और मुसलमान भी, क्योंकि दोनों कबीरजी को मानते थे । राजा

वीरदेव सिंह बघेल भी कबीरजी को मानता था और नवाब बिजुली खान भी। जो कबीरजी को अपना विरोधी मानते थे, वे हिन्दू-मुसलमान भी कबीरजी के आगे मत्था टेकने लगे।

कबीरजी की अंत्येष्टि कैसे की जाय, इस पर दो अलग-अलग पक्ष हो गये। मुसलमानों ने कहा : 'ये हमारे पीर हैं इसलिए हम इन्हें दफनायेंगे।' हिन्दुओं ने कहा : 'नहीं, ये हमारे संत हैं इसलिए हम इनका अग्नि-संस्कार करेंगे।' दोनों पक्ष अपने-अपने निश्चय पर अडिग थे। आखिर विवाद ने जोर पकड़ा।

वास्तव में जैसे सूरज सबका है, वैसे ही जिनके दिल में भगवान या अल्लाह प्रकट हुए हैं वे संत सबके होते हैं।

किंवदन्ती है कि विवाद बढ़ता गया। आखिर कबीरजी के शरीर पर से चादर हटायी गयी तो उनके शरीर की जगह पर सुगंधित फूलों का ढेर था! दोनों पक्ष के लोगों ने थोड़े-थोड़े फूल लिये और अपने-अपने ढंग से अंत्येष्टि की। इसका दूसरा अर्थ है कि संतों के महाप्रयाण के बाद उनके सत् जीवन, सत्संग और सद्ज्ञान की सुवास ही तो रहती है। हिन्दुओं ने अपने ढंग से उसका प्रचार-प्रसार किया और मुसलमानों ने अपने ढंग से। होता भी यही है। संत चले जाते हैं और उनके आत्मिक प्रेमप्रकाश की सुवास, सुगंध ही तो रहती है।

कैसे वर्णन करें संतों की महिमा का! वे जब तक विद्यमान रहते हैं तब तक लोकमांगल्य के पावन कार्य उनके द्वारा होते रहते हैं और जब वे चले जाते हैं तो उनके दैवी कार्यों की सुवास जिज्ञासु जनों को उनके पथ पर चलने के लिए प्रेरित करती रहती है।

भाग्यशाली तो वे ही हैं जो ऐसे महापुरुषों को उनके जीवनकाल में पहचानकर उनसे लाभ उठा पाते हैं।

गोरख जागता नर सेविये...

संत-आज्ञा की महिमा

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

केरल में नवोत्तर नामक एक बड़े सरल स्वभाव के संत हो गये। वे एकांत में रहते थे और बैठे-बैठे कुछ गुनगुनाते रहते, जिससे कुछ कविताएँ बन गयीं।

साधनाकाल में उनका भगवान श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम था, अतः कविताएँ भी कृष्ण-प्रेम से परिपूर्ण थीं। उन्होंने सोचा कि 'ये कविताएँ ठीक-ठाक हैं या इनमें कुछ कमी है, जरा अपने मित्र को पढ़ा आऊँ।'

उनके मित्र कवि मोत्तुरम नारायण मलयालम भाषा भी जानते थे और संस्कृत भाषा के भी बड़े विद्वान पंडित थे।

संत नवोत्तर ने कवि मोत्तुरम नारायण के पास जाकर कहा : ''मेरी इन कविताओं में कुछ गलतियाँ हो सकती हैं। आप जरा इन्हें सुधार दीजिये।''

कवि ने सोचा कि 'ये संतपुरुष हैं। इनकी गलतियाँ ढूँढ़ना और सुधारना अपने सिर पर क्यों लें?'

कवि ने कहा : ''मैं मलयालम भाषा इतनी अच्छी तरह से नहीं जानता। आप किसी दूसरे से यह काम करवा लीजिये।''

संत चुप्पी रखकर चल दिये। संत किसीकी बात पी जायें तो समझो, उसकी नींद हराम होनेवाली है। संत के दिल में थोड़ी-सी भी चोट पहुँचायी तो चोट पहुँचानेवाले की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। वह फिर उलटे निर्णय करने लगता है।

लोगों की धारणा है कि काशी में देह छोड़ने से मुक्ति मिलती है और मगहर में देह छोड़ने से नरक में जाते हैं। भगवद्भक्ति की महिमा को प्रकट करने के लिए कबीरजी ने लोकमान्यताओं को ठुकराकर मगहर में देह छोड़ने का निर्णय किया।

मगहर जाने की घोषणा सुनकर कई पंडितों तथा मुल्ला-मौलवियों ने कबीरजी को घेर लिया और कहा :

''जीवनभर तो आपने लोगों को खरी सुनायी :

पाहन पूजे हरि मिलै, तो मैं पूजूँ पहार।
ता तें तो चक्की भली, पीसि खाय संसार॥
काँकर पाथर जोरि के, मसजिद लई चुनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बाँग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय॥

जीवनभर आपने हमारी बातें काटी हैं। उसका फल भुगतने के लिए कहीं आपको नरक में न जाना पड़े, इसलिए आप काशी में ही रहें और यहीं प्राण त्यागें ताकि आपकी सद्गति हो।''

कबीरजी ने कहा : ''ना, ना। काशी में रहूँ तो सद्गति होगी और मगहर में रहूँगा तो दुर्गति होगी, ऐसी बात नहीं है। सभी स्थान मेरे भगवान के हैं। भगवान की भक्ति का माहात्म्य ज्यादा है। हम कहीं भी मरें तो क्या है ?

मनहु कठोर मरै बानारसि, नरकु न बांचिआ जाई।
हरि का संतु मरै हाड़ंबै, त सगली सैन तराई॥

जो मन का कठोर है, क्रूर है, जिसकी भगवान में प्रीति नहीं है वह काशी में मरे तो भी क्या नरक से बचेगा ? और जिसका मन भगवान में है वह मगहर में मरेगा तो क्या गधा बनेगा ? वह तो अपने कुटुंबियों और शिष्यों को भी तारकर भगवान के साथ मिला देगा।

कवनु नरकु किआ सुरगु बिचारा संतन दोऊ रादे।
हम काहू की काणि न कढते अपने गुर परसादे।
अब तउ जाइ चढे सिंघासनि मिले है सारिंगपानी।
राम कबीरा एक भये हैं कोइ न सकै पछानी॥

हम नरक-स्वर्ग की, काशी-मगहर की चिंता नहीं करते क्योंकि हमको तो गुरु की प्रसादी मिल गयी है। अब हम जहाँ भी रहेंगे, वहाँ हमारे साथ हमारे प्रभु हैं।''

मगहर को दो कलंक लगे थे :

(१) जो मगहर में मरेगा वह अगले जन्म में गधा बनेगा।

(२) यहाँ पानी की बड़ी तंगी रहेगी।

मगहर के कलंक धोने के लिए कबीरजी ने सन् १५१८ में मगहर के लिए प्रयाण किया। कहते हैं कि वहाँ की आमी नदी जो केवल बरसात में ही बहती थी, कबीरजी के वहाँ रहने के बाद बारहों महीने बहने लगी!

मगहर में एक दिन सुबह कबीरजी ने सबको दर्शन देते हुए कहा :

''संसार स्वप्न है। सुख में डूबना नहीं और दुःख से घबराना नहीं। यह शरीर तो आत्मा का चोला है, इसे एक दिन छोड़ना ही है। आज मेरा चोला छोड़ने का दिन है। आप लोग दुःखी मत होना।

संत मरे क्या रोइये जाय अपने घर।

जैसे घड़े का आकाश महाकाश से मिलता है, ऐसे संत का आत्मा परमात्मा से मिलता है। अब आप लोग रोना-चीखना नहीं और कमरे के भीतर कोई प्रवेश मत करना। खबरदार किसीने दरवाजा खटखटाया तो... !''

कबीरजी कमरे में चले गये। धरती में छोटी-सी गुफा जैसा कमरा है। हम देखकर भी आये हैं। कबीरजी परमेश्वर का चिंतन करते-करते सौम्यभाव से लेट गये। 'सोऽहं' स्वरूप में एकाकार होते-होते उन्होंने अपनी नश्वर देह छोड़ दी।

भक्तों को इंतजार करते-करते दोपहर हो गयी। आखिर कुछ भक्तों ने साहस करके भीतर प्रवेश किया तो देखा कि कबीरजी के चेहरे पर बड़ी शांति छायी हुई है किंतु शरीर हिलडुल नहीं रहा। अब तो हिन्दू भी रोने लगे और मुसलमान भी, क्योंकि दोनों कबीरजी को मानते थे। राजा

कहा भी गया है : **रब रुसे त मत खसे ।**

इतने बड़े संस्कृत के विद्वान और मलयालम भाषा के जानकार पंडित कवि मोत्तुरम नारायण को रातभर नींद न आयी। वे बड़े बेचैन हो उठे। वे भी कृष्णभक्त थे। उन्होंने श्रीकृष्ण से प्रार्थना की : 'हे प्रभु ! मैंने खान-पान में तो कोई गड़बड़ी नहीं की, फिर मुझे नींद क्यों नहीं आ रही ?' इस तरह प्रार्थना करते-करते वे सो गये। उन्हें स्वप्न में ऐसा लगा मानों, श्रीकृष्ण कह रहे हैं : 'तुमने बड़ा अपराध किया है। तुमने संत की अवज्ञा की है। जो संत की अवज्ञा करता है, उसके पुण्य नष्ट हो जाते हैं और उस पर प्रकृति का प्रकोप होता है। यह अनिद्रा का रोग तुम्हें सावधान करने के लिए भेजा गया है क्योंकि तुम भी मेरे भक्त हो।

वे संत तुमसे स्नेह करते हैं इसलिए तुम पर विश्वास करके उन्होंने तुमसे अपनी कविताएँ ठीक करवानी चाहीं और तुमने उनकी बात टाल दी। जो संत की बात की अवहेलना करे, वह मेरा भक्त कैसा ? जाओ, उनसे क्षमायाचना करो और उनकी कविताएँ देखो। जैसा वे चाहते हैं उसी प्रकार कविताओं में सुधार करो, तभी तुम्हें शांति मिलेगी। संत का कार्य मेरा कार्य होता है। संत के हृदय से मैं ही अठखेलियाँ करता हूँ। तुम मेरे मध्यम भक्त हो और वे पूर्ण भक्त हैं। तुम मेरी आकृति को जानते हो जबकि वे मेरे स्वरूप को ज्यों-का-त्यों जानते हैं। तुम मेरी लीलाओं का सुमिरन करते हो और वे मेरा सुमिरन करते हैं। तुम मुझे द्वैत-बुद्धि से मानते हो लेकिन वे मुझे अद्वैत-बुद्धि से जानते हैं। इसलिए तुम स्वयं उनके पास जाओ और उनका कार्य पूर्ण करो।'

केरल का वह प्रसिद्ध विद्वान उन महापुरुष की कुटिया पर पहुँचा। दो दिन पहले जब वे ही महापुरुष उसके महल में गये थे तो उसने सुना-अनसुना कर दिया था, किंतु अब वही विद्वान महापुरुष की कुटिया पर पहुँचा। संत के चरणों में गिरकर उसने क्षमायाचना की : ''महात्मन् ! मुझे क्षमा कीजिये। मैंने आपकी अवज्ञा की। पहले मैं आपको पहचान नहीं पाया था, किंतु भगवान श्रीकृष्ण की कृपा से अब मैंने आपको पहचाना है। आपकी वह पोथी दीजिये जिसमें आपने कविताएँ लिखी हैं।''

संत तो होते ही क्षमाशील हैं। उन्होंने अपनी पोथी दे दी और कवि ने बड़े चाव से उनकी कविताएँ देखीं। उसके बाद कवि को बड़ी अच्छी नींद आयी और वे स्वप्न में क्या देखते हैं कि श्रीकृष्ण मंद-मंद मुस्करा रहे हैं...

कैसे हैं ये भगवान ! भक्तों का कितना ख्याल रखते हैं ! हे प्रेमावतार, हे प्रेरणावतार प्रभो ! ॐ... ॐ... आनंददाता, प्रेरणादाता देव ! जय हो, जय हो... वे ही सच्चिदानंद निर्गुण-निराकार होकर, अपना आपा होकर बैठे हैं। श्रीकृष्ण, श्रीराम या सद्गुरुदेव के रूप में वे प्रेरणा भी दे देते हैं और उलझी गुत्थियाँ सुलझा भी देते हैं।

गीता प्रश्नोत्तरी

१५१. गुणातीत किसे कहते हैं ?
१५२. द्वंद्व किसे कहते हैं ?
१५३. जीव क्या है ?
१५४. जीवात्मा विषयों का सेवन कैसे करता है ?
१५५. इस लोक में कितने पुरुष हैं ?
१५६. गीता के पहले अध्याय को 'विषादयोग' क्यों कहा है ?
१५७. कार्य और अकार्य की व्यवस्था में प्रमाण क्या है ?
१५८. सिद्धि, सुख व परम गति किसे नहीं मिलती ?
१५९. यज्ञ कितने प्रकार के हैं ?
१६०. गीता के अनुसार तप कितने प्रकार के हैं ?

पिछले अंक के प्रश्नों के उत्तर

१४१. अभ्यास १४२. परमात्मा के लिए कर्म करना १४३. कर्म करना और फल का त्याग कर देना १४४. जो समभाव में रहता है १४५. तीन १४६. सत्त्व, रज और तम १४७. निर्मल एवं प्रकाशक १४८. रागात्मक एवं कर्मफल का बंधक १४९. अंधकार, प्रमाद, आलस्य और निद्रा १५०. सत्त्वगुण में।

सद्गुरु सच्चे बादशाह

[गुरु हरगोविंद सिंह जयंती : ४ जून]

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

एक बार सिखों के छठे गुरु हरगोविंद साहब से मुगल बादशाह जहाँगीर ने कहा : ''गुरुओं की बातों में मुझे ज्यादा विश्वास नहीं है। मुझे एक बात और खटकती है कि आपको लोग 'सच्चे बादशाह' कहते हैं। आप इसका मतलब बताइये।''

गुरु ने कहा : ''जहाँगीर ! वक्त आयेगा तब तुझे इस बात का अनुभव हो जायेगा।''

समय ने करवट ली। एक दिन जहाँगीर बादशाह और हरगोविंद साहब - दोनों आगरा के अरण्य में शिकार खेलने के लिए गये। दोपहर के समय दोनों अपने-अपने खेमों में आराम कर रहे थे।

एक घसियारा था। वह घास काटकर बेचता और अपना गुजारा करता। उसने सुना कि गुरु आगरा के अरण्य में पधारे हैं तो सोचा कि 'गुरु के पास जाऊँ तो कुछ लेकर जाऊँ।' उसने गुरुसाहब के घोड़े के लिए बढ़िया-सा घास एकत्रित किया और उसका गट्ठर सिर पर उठाये चल पड़ा। सिर पर बोझा था लेकिन दिल में प्रीति थी। बाहर धूप थी लेकिन भीतर शीतलता थी।

दुर्भाग्यवश हरगोविंद साहब के खेमे के बदले वह जहाँगीर बादशाह के खेमे की तरफ जा पहुँचा। उसने सैनिकों से पूछा : ''साहब कहाँ रहते हैं ?''

सैनिकों ने समझा कि जहाँगीर साहब के लिए पूछ रहा है। वे उसे जहाँगीर के खेमे के पास ले गये। दरबान ने कहा : ''साहब से मिलना है तो यह घास बाहर रख।''

घसियारा : ''नहीं, बहुत दिनों से इंतजार था बादशाह का। मैं उनके पास खाली हाथ नहीं जाऊँगा। बादशाह साहब के घोड़े की सेवा मेरे मुकद्दर में भी लिखने दो।''

जहाँगीर घसियारे और दरबान की बातचीत सुन रहा था। दरबान इनकार कर रहा था और घसियारा श्रद्धा-प्रेम से भरी वाणी में गिड़गिड़ा रहा था। जहाँगीर बादशाह ने भीतर से आवाज लगायी : ''इसे भीतर आने दो।''

घसियारा खुश हो गया कि 'देखो, सच्चे बादशाह ने मेरी पुकार सुन ली।' उसने गुरु हरगोविंद साहब का केवल नाम सुन रखा था, उन्हें देखा नहीं था। उसने गट्ठर नीचे धरा, टक्का रखा और मत्था टेका। उस जमाने का टक्का आज के रुपये से भी अधिक मूल्य रखता था। एक टक्के में लोग दिनभर का भोजन कर सकते थे। समझो, १० रुपये रख दिये उसने। वह भक्त जहाँगीर से कहता है : ''सच्चे बादशाह ! आज तक आपका केवल नाम सुन रखा था लेकिन आज इस पापी जीव को आपके रू-बरू दर्शन हुए। सच्चे बादशाह ! मैं धन्य हो गया... मुझे और तो कुछ नहीं चाहिए, केवल मुक्ति का मार्ग बताने की कृपा करें। मेरा जन्म-मरण का चक्र तोड़ने की कृपा करें।''

जहाँगीर उसकी प्रेमाभक्ति, नम्रता और प्रीति से बड़ा प्रभावित हुआ। किंतु जहाँगीर के बाप की भी ताकत नहीं थी कि उसे मुक्ति दे सके, जन्म-मरण से पार कर सके। वह तो सच्चे बादशाह, सद्गुरु लोग ही कर सकते हैं।

जहाँगीर खुश हुआ और मन-ही-मन सोचने लगा कि 'इसको क्या दूँ ?'

जहाँगीर ने कहा : ''देखो, यह चौरासी के चक्कर से छूटने की बात छोड़ दो, मुक्ति की बात भूल जाओ। यह सब बकवास है। मैं सच्चा बादशाह जहाँगीर, खुद खुदा का खास आदमी हूँ। तुम्हें चाहिए तो एक रियासत तुम्हारे नाम कर दूँ। घोड़े-गाड़ियाँ आदि सब तुम्हें मिल जायेंगे, फिर मौज से जीवन जीना।''

तब भारत का वह घसियारा कहता है :

''अच्छा, मैं गलत जगह पर आ गया हूँ।''

''नहीं, नहीं। तुम सही जगह पर आये हो। सच्चा बादशाह तो मैं ही हूँ। देख लो, मेरा राजवैभव ! जो चाहो, वह तुम्हें मिल सकता है।''

''आप नश्वर चीजें दे सकते हैं, भोग-वस्तुएँ दे सकते हैं लेकिन अंदर का संतोष और जन्म-मरण से पार करनेवाला ब्रह्मज्ञान नहीं दे सकते। आपकी दी हुई चीजों से मैं दुनिया के भुलावे में पड़ सकता हूँ कि 'मेरे पास इतने घोड़े हैं, मेरी इतनी गाड़ियाँ हैं, मेरी इतनी रियासतें हैं...' बादशाह ! आप बुरा मत मानना। मेरा तो शरीर भी नहीं रहेगा फिर मेरी ये चीजें कब तक रहेंगी ?''

उसने जहाँगीर के पास रखा अपना टक्का उठा लिया, घास का गट्ठर सिर पर रखा और यह कहते हुए चल पड़ा कि 'मैं गलती से यहाँ आया।'

जहाँगीर के मुँह पर मानों, थप्पड़ लगा ! अब उसे पता चला कि सच्चे बादशाह कौन होते हैं।

नश्वर चीजों की कोई महत्ता नहीं है। जो सच्चे बादशाह होते हैं, सद्गुरु होते हैं वे शाश्वत शांति, शाश्वत ज्ञान और शाश्वत प्रीति देते हैं। उनके आगे जहाँगीर का राज्य तो क्या, सारी पृथ्वी का राज्य भी दो कौड़ी की कीमत नहीं रखता।

जब मिला आतम हीरा। जगत हो गया सवा कसीरा॥

वह घसियारा चलते-चलते गुरु हरगोविंद साहब के खेमे में पहुँचा। गुरुजी के श्रीचरणों में टक्का रखा, घास का गट्ठर रखा और मत्था टेका। गुरु हरगोविंद साहब ने देखा कि बाहर से तो गरीब दिखता है, घास काटकर गुजारा करता है लेकिन भीतर से इसकी बुद्धि बहुत ऊँची है, यह भीतर से धनी है। बाहर से कंगाल दिखता है किंतु कई अमीर भी इसकी आध्यात्मिकता के आगे कंगाल हैं।

गुरु हरगोविंद सिंह ने उससे बातचीत की। आखिर उसने कहा : ''सच्चे बादशाह ! मैंने आपका नाम सुन रखा था। आज मैं आपके दीदार के लिए निकला था लेकिन गलती से जहाँगीर के खेमे में चला गया। वह मुझे इधर-उधर की चीजें देना चाहता था किंतु उनसे रब का रस तो नहीं मिलता। अगर रब का रस नहीं मिला तो विकारी रसों में तो जीव जन्मों से भटक रहा है। भोगों में उलझानेवाले नकली बादशाह के पास मैं गलती से चला गया था। सच्चे बादशाह ! वह तो नकली, माया का सुख दे रहा था। यह आपकी ही रहमत थी कि मैं माया से बचकर आपके श्रीचरणों तक पहुँच पाया। सच्चा सुख बाहर के विषय-विकारों में नहीं वरन् अपने ही भीतर है - यह सुन रखा है। सच्चे बादशाह ! अब आप मुझे सच्चे सुख का मार्ग बताने की कृपा करें।''

ऊँचे-में-ऊँचा सुख है रब का सुख। उस सुख को जो चाहता है उसकी समझ ऊँची है। जब सद्गुरु किसीकी ऊँची समझ देखते हैं तो उनका दिल खुश होता है। ऊँची समझ का धनी बाहर से गरीब हो तो भी वे खुश हो जाते हैं और अमीर हो तो भी।

गुरु हरगोविंद सिंह ने उसे सत्संग सुनाया : ''बेटा ! संसार सुख और दुःख, जीवन और मृत्यु, लाभ और हानि का ताना-बाना है। संसार आने और जाने, मिलने एवं बिछुड़ने के ताने-बाने से बना है, किंतु तेरा आत्मा इनसे अलग है। अगर तू अपने को शरीर मानेगा तो संसार के ताने-बाने में फँस जायेगा, लेकिन यदि तू अपने को रब का और रब को अपना मानेगा तो यह ताना-बाना तुझे नहीं बाँधेगा, तू इस ताने-बाने से पार हो जायेगा। मेरे प्यारे सिख ! तू मेरा सच्चा सिख है।''

सच्चा सिख वही है जो गुरु की सीख मान ले। गुरु ने अपनी गहरी अनुभूति की बातें उसे सुनायीं। घसियारे को लगा : 'आज मेरा जन्म सफल हो गया।'

भागु होआ गुरि संतु मिलाइआ ॥
प्रभु अबिनासी घर महि पाइया ॥

धनभागी हैं वे लोग, जो भोग-विकारों में उलझानेवाले नकली बादशाहों से बचकर शाश्वत शांति और शाश्वत ज्ञान देनेवाले सद्गुरुओं को, सच्चे बादशाहों को खोज लेते हैं एवं उनका मार्गदर्शन पाकर अपने जीवन की मंजिल तय करने के लिए चल पड़ते हैं...

*

एकादशी माहात्म्य

[निर्जला एकादशी : ३० मई]

युधिष्ठिर ने कहा : जनार्दन ! ज्येष्ठ मास के शुक्लपक्ष में जो एकादशी आती हो, कृपया उसका वर्णन कीजिये।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! उसका वर्णन परम धर्मात्मा सत्यवतीनंदन व्यासजी करेंगे, क्योंकि ये सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्त्वज्ञ और वेद-वेदांगों के पारंगत विद्वान हैं।

तब वेदव्यासजी कहने लगे : दोनों ही पक्षों की एकादशियों के दिन भोजन न करे। द्वादशी के दिन स्नान आदि से पवित्र हो फूलों से भगवान केशव की पूजा करे। फिर नित्यकर्म समाप्त होने के पश्चात् पहले ब्राह्मणों को भोजन देकर अंत में स्वयं भोजन करे। राजन् ! जननाशौच और मरणाशौच में भी एकादशी को भोजन नहीं करना चाहिए।

भीमसेन बोले : परम बुद्धिमान पितामह ! मेरी उत्तम बात सुनिये। राजा युधिष्ठिर, माता कुन्ती, द्रौपदी, अर्जुन, नकुल और सहदेव - ये एकादशी को कभी भोजन नहीं करते तथा मुझसे भी हमेशा यही कहते हैं कि 'भीमसेन ! तुम भी एकादशी को न खाया करो।' किंतु मैं उन लोगों से यही कहता हूँ कि मुझसे भूख नहीं सही जायेगी।

भीमसेन की बात सुनकर व्यासजी ने कहा : यदि तुम्हें स्वर्गलोक की प्राप्ति अभीष्ट है और नरक को दूषित समझते हो तो दोनों पक्षों की एकादशियों के दिन भोजन न करना।

भीमसेन बोले : महाबुद्धिमान पितामह ! मैं आपके सामने सच्ची बात कहता हूँ। एक बार भोजन करके भी मुझसे व्रत नहीं किया जा सकता, फिर उपवास करके एकदम निराहार तो मैं रह ही कैसे सकता हूँ ? मेरे उदर में वृक नामक अग्नि सदा प्रज्वलित रहती है, अतः जब मैं बहुत अधिक खाता हूँ, तभी यह शांत होती है। इसलिए महामुने ! मैं वर्षभर में केवल एक ही उपवास कर सकता हूँ। जिससे स्वर्ग की प्राप्ति सुलभ हो तथा मैं कल्याण का भागी हो सकूँ, ऐसा कोई एक व्रत निश्चय करके बताइये। मैं उसका यथोचित रूप से पालन करूँगा।

व्यासजी ने कहा : भीम ! ज्येष्ठ मास में सूर्य वृष राशि पर हो या मिथुन राशि पर, शुक्लपक्ष में जो एकादशी हो, उसका यत्नपूर्वक निर्जल व्रत करो। केवल कुल्ला या आचमन करने के लिए मुख में जल डाल सकते हो, उसको छोड़कर किसी प्रकार का जल विद्वान पुरुष मुख में न डाले, अन्यथा व्रत भंग हो जाता है। एकादशी को सूर्योदय से लेकर दूसरे दिन के सूर्योदय तक मनुष्य जल का त्याग करे तो यह व्रत पूर्ण होता है। तदनंतर द्वादशी को प्रभातकाल में स्नान करके ब्राह्मणों को विधिपूर्वक जल और सुवर्ण का दान करे। इस प्रकार सब कार्य पूरा करके जितेन्द्रिय पुरुष ब्राह्मणों के साथ भोजन करे। वर्षभर में जितनी एकादशियाँ होती हैं, उन सबका फल निर्जला एकादशी के सेवन से मनुष्य प्राप्त कर लेता है, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। शंख, चक्र और गदा धारण करनेवाले भगवान केशव ने मुझसे कहा था कि 'यदि मानव सबको छोड़कर एकमात्र मेरी शरण में आ जाय और एकादशी को निराहार रहे तो वह सब पापों से छूट जाता है।'

एकादशी व्रत करनेवाले पुरुष के पास विशालकाय, विकराल आकृति और काले रंगवाले दंड-पाशधारी भयंकर यमदूत नहीं जाते। अंतकाल में पीताम्बरधारी, सौम्य स्वभाववाले, हाथ में सुदर्शन चक्र धारण करनेवाले और मन

के समान वेगशाली विष्णुदूत उस वैष्णव पुरुष को भगवान विष्णु के धाम में ले जाते हैं। अतः निर्जला एकादशी को पूर्ण यत्न करके उपवास और श्रीहरि का पूजन करो। स्त्री हो या पुरुष, यदि उसने मेरु पर्वत के बराबर भी महान पाप किया हो तो वह सब इस एकादशी व्रत के प्रभाव से भस्म हो जाता है। जो मनुष्य उस दिन जल के नियम का पालन करता है, वह पुण्य का भागी होता है। उसे एक-एक प्रहर में कोटि-कोटि स्वर्णमुद्रा दान करने का फल प्राप्त होता सुना गया है। मनुष्य निर्जला एकादशी के दिन स्नान, दान, जप, होम आदि जो कुछ भी करता है, वह सब अक्षय होता है, यह भगवान श्रीकृष्ण का कथन है। निर्जला एकादशी को विधिपूर्वक उत्तम रीति से उपवास करके मानव वैष्णवपद को प्राप्त कर लेता है। जो मनुष्य एकादशी के दिन अन्न खाता है, वह पाप का भोजन करता है। इस लोक में वह चांडाल के समान है और मरने पर दुर्गति को प्राप्त होता है।

जो ज्येष्ठ के शुक्लपक्ष में एकादशी को उपवास करके दान करेंगे, वे परम पद को प्राप्त होंगे। जिन्होंने एकादशी को उपवास किया है, वे ब्रह्महत्यारे, शराबी, चोर तथा गुरुद्रोही होने पर भी सब पातकों से मुक्त हो जाते हैं।

कुन्तीनंदन! 'निर्जला एकादशी' के दिन श्रद्धालु स्त्री-पुरुषों के लिए जो विशेष दान और कर्तव्य विहित हैं, उन्हें सुनो : उस दिन जल में शयन करनेवाले भगवान विष्णु का पूजन और धेनु का दान उचित है। पर्याप्त दक्षिणा और भाँति-भाँति के मिष्टान्नों द्वारा यत्नपूर्वक ब्राह्मणों को संतुष्ट करना चाहिए। ऐसा करने से ब्राह्मण अवश्य संतुष्ट होते हैं और उनके संतुष्ट होने पर श्रीहरि मोक्ष प्रदान करते हैं। जिन्होंने शम, दम और दान में प्रवृत्त हो श्रीहरि की पूजा और रात्रि में जागरण करते हुए इस 'निर्जला एकादशी' का व्रत किया है, उन्होंने अपने साथ ही बीती हुई सौ पीढ़ियों को और आनेवाली सौ पीढ़ियों को भगवान वासुदेव के परम धाम में पहुँचा दिया है। निर्जला एकादशी के दिन अन्न, वस्त्र, गौ, जल, शय्या, सुन्दर आसन, कमंडलु तथा छाता दान करने चाहिए। जो श्रेष्ठ तथा सुपात्र ब्राह्मण को जूता दान करता है, वह सोने के विमान पर बैठकर स्वर्गलोक में प्रतिष्ठित होता है। जो इस एकादशी की महिमा को भक्तिपूर्वक सुनता अथवा उसका वर्णन करता है, वह स्वर्गलोक में जाता है। चतुर्दशीयुक्त अमावस्या को सूर्यग्रहण के समय श्राद्ध करके मनुष्य जिस फल को प्राप्त करता है, वही फल इसके श्रवण से भी प्राप्त होता है। पहले दंतधावन करके यह नियम लेना चाहिए कि 'मैं भगवान केशव की प्रसन्नता के लिए एकादशी को निराहार रहकर आचमन के सिवा दूसरे जल का भी त्याग करूँगा।' द्वादशी को देवेश्वर भगवान विष्णु का पूजन करना चाहिए। गंध, धूप, पुष्प और सुंदर वस्त्र से विधिपूर्वक पूजन करके जल के घड़े के दान का संकल्प करते हुए निम्नांकित मंत्र का उच्चारण करे :

देवदेव हृषीकेश संसारार्णवतारक।
उदकुम्भप्रदानेन नय मां परमां गतिम्॥

'संसारसागर से तारनेवाले हे देवदेव हृषीकेश! इस जल के घड़े का दान करने से आप मुझे परम गति की प्राप्ति कराइये।'

(पद्म पु. उ. खंड : ५३.६०)

भीमसेन! निर्जला एकादशी के दिन श्रेष्ठ ब्राह्मणों को शक्कर के साथ जल के घड़े दान करने चाहिए। ऐसा करने से मनुष्य भगवान विष्णु के समीप पहुँचकर आनंद का अनुभव करता है। तत्पश्चात् द्वादशी को ब्राह्मण-भोजन कराने के बाद स्वयं भोजन करे। जो इस प्रकार पूर्ण रूप से पापनाशिनी एकादशी का व्रत करता है, वह सब पापों से मुक्त हो अनामय पद को प्राप्त होता है।

यह सुनकर भीमसेन ने भी इस शुभ एकादशी का व्रत आरम्भ कर दिया।

('पद्म पुराण' से)

*

वेदांत-श्रवण की महिमा

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

मुख्य रूप से दर्शन के दो प्रकार हैं :

(१) आस्तिक दर्शन (२) नास्तिक दर्शन

नास्तिक दर्शनवाले विचार तो करते हैं किंतु उनके दर्शन में ईश्वर का कोई स्थान नहीं है । वे ईश्वर को नहीं स्वीकारते वरन् तर्क के आधार पर ही दुनिया का विश्लेषण करके उसको सत्य सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं ।

आस्तिक दर्शन के छः प्रकार हैं :

(१) न्याय (२) वैशेषिक
(३) सांख्य (४) योग
(५) पूर्व मीमांसा (६) उत्तर मीमांसा (वेदांत)

इनमें से प्रथम पाँच दर्शनों में ईश्वर को भेदबुद्धि से माना जाता है । केवल वेदांत दर्शन ही एक ऐसा है जो ईश्वर को अभेद मानने की बात करता है । वेदांत दर्शन में अन्य सभी दर्शनों का समावेश हो जाता है । इस दर्शन को समझाने के लिए दो प्रकार के ग्रंथ हैं :

(१) प्रक्रिया ग्रंथ (२) सिद्धांत ग्रंथ

विचार चंद्रोदय, विचार सागर, पंचीकरण, पंचदशी आदि प्रक्रिया ग्रंथ हैं, जिनमें छोटी-छोटी बातें समझाकर बड़ी, उससे बड़ी बातें क्रमशः समझायी गयी हैं ।

जिन ग्रंथों में निष्प्रपंच में प्रपंच की कल्पना करके तत्त्व को समझाया जाता है, वे हैं सिद्धांत ग्रंथ, जैसे 'श्री योगवाशिष्ठ महारामायण' । सिद्धांत ग्रंथ में लक्ष्य को समझाने के लिए इतिहास-पुराण की वार्ताएँ तो होती हैं किंतु साथ ही यह भी कह दिया जाता है कि 'चित्त के शांत होने पर कुछ भी नहीं है ।' 'हे रामजी ! जगत तीनों कालों में बना ही नहीं है ।'

वेदों में १ लाख मंत्र हैं जिनमें ८० हजार मंत्र कर्मकांड के हैं, १६ हजार मंत्र उपासना कांड के हैं और ४ हजार मंत्र ज्ञानकांड के हैं ।

आप ८० हजार मंत्रों की मदद से हर रोज नये-नये कर्मकांड करना चाहो तो कर सकते हो । किंतु यदि बार-बार वेदांत-श्रवण किया जाय तो ८० हजार मंत्रों के अनुष्ठान का फल - अंतःकरण की शुद्धि सहज में ही हो जायेगी ।

यदि तुम न भी चाहो तो भी सुने हुए शब्द तुम्हारे चित्त में तदनुरूप भावना पैदा कर देते हैं । इसलिए सुनने में बड़ी सावधानी रखनी चाहिए । किसीके मलिन वचन न सुनो । तुम्हें जीवभाव में, विकारों में बाँध लें ऐसे वचनों को न तो सुनो, न ही ऐसे वचनोंवाला साहित्य पढ़ो ।

वेदांत को बार-बार सुनने से कर्मकांड के ८० हजार मंत्रों के अनुष्ठान का कार्य पूरा हो जाता है । सुने हुए वचनों का बार-बार मनन करने लगें तो वेद के उपासना कांड के १६ हजार मंत्रों के अनुष्ठान का फल मिल जाता है । बाकी रहे ४ हजार मंत्र... वेदांत का श्रवण-मनन करते-करते निदिध्यासन करने लगें तो ज्ञानकांड के ४ हजार मंत्रों के अनुष्ठान का कार्य भी पूरा हो जाता है ।

फिर प्रणव के तत्त्व का ज्ञान मिल जाय तो साधक कृतकृत्य हो जाता है, जिसके लिए उसका मनुष्य-जन्म हुआ था वह हेतु सिद्ध हो जाता है । किंतु यदि इस तत्त्व को पाने के लिए वह पुरुषार्थ नहीं करता तो उसका मानव-जीवन व्यर्थ ही चला जाता है । फिर चाहे वह धन पा ले, सत्ता पा ले, यश पा ले किंतु तत्त्वज्ञान को नहीं पाया तो सब पाना व्यर्थ हो जाता है, मृत्यु के एक ही झटके में सब छूट जाता है । यदि एक बार अपने आत्मा-परमात्मा को पा लिया, फिर चाहे दूसरा कुछ भी न मिले तो भी कोई परवाह नहीं रहती ।

एक साधे सब सधै, सब साधे सब जाय...

ज्ञान का आखिरी छोर, आध्यात्मिकता की पराकाष्ठा है - वेदांत । वेदांत को सुनने की महिमा यह है कि -

(१) अगर ठीक से वेदांत का श्रवण-मनन

किया तो मनुष्य निर्भय हो जाता है। उसे किसी व्यक्ति, वस्तु अथवा परिस्थिति के उपजने-नष्ट होने का भय नहीं रहता। यहाँ तक कि वह मौत से भी निर्भय हो जाता है क्योंकि उसको अनुभव हो जाता है कि 'मौत इस शरीर की होगी, मेरी नहीं। मैं तो अजर, अमर, अविनाशी आत्मा हूँ।'

(२) वेदांत-श्रवण से मनुष्य का अध्यास छूट जाता है। अध्यास दो प्रकार का होता है : अन्योन्याध्यास और संसर्गाध्यास।

जैसे - हम हैं तो सत्-चित्-आनंदस्वरूप आत्मा किंतु असत्, जड़ और दुःखरूप शरीर को 'मैं' मान बैठे हैं और सत्-चित्-आनंदस्वरूप आत्मा को कहीं आकाश-पाताल में मानते हैं। यह अन्योन्याध्यास है।

दूसरा है संसर्गाध्यास। जैसे - हम कार में बैठे हों और कार किसी रेलवे पुल के नीचे से गुजर रही हो, तब कभी-कभी दृश्य के साथ हमारा इतना संसर्ग हो जाता है कि ऊपर से कोई रेलगाड़ी जा रही हो तो हमारा सिर अनायास ही झुक जाता है। हम यह नहीं समझते कि रेलगाड़ी और हमारे सिर के बीच पुल और कार की छत भी है, सिर नहीं झुकायेंगे तो चल जायेगा। यह संसर्गाध्यास है।

अगर वेदांत का सत्संग ठीक से सुन लें तो इस प्रकार का संसर्गाध्यास अथवा अन्योन्याध्यास नहीं रहेगा।

(३) वेदांत-श्रवण की तीसरी महिमा है - दृश्य को आभासरूप जानना। वेदांत यह समझ दे देता है कि जो भी दिखता है, सब आभासमात्र है। जैसे - यह फूलों की माला है। किसीसे ली, किसीको दी किंतु लगेगा कि यह कुछ भी नहीं है। यह पहले नहीं थी, बाद में भी नहीं रहेगी और अभी भी नहीं की ओर जा रही है। ऐसे ही यह पूरा संसार भी फूलों की माला जैसा ही है।

वेदांत हमें ज्ञानमयी दृष्टि देता है। जिस बेवकूफी के कारण यह संसार हमें सत्य एवं स्थिर भासता है, उसको हटाकर जिसकी सत्ता से ऐसा भासता है उस परमात्मा का साक्षात्कार करा देता है वेदांत। वेदांत की महिमा अद्भुत है!

लाभदायक मुद्राएँ

ध्यान मुद्रा

विधि : पद्मासन या सुखासन में बैठें। बायीं हथेली पर दायीं हथेली रखें। दोनों हाथों के अँगूठे तर्जनी (अँगूठे के नजदीक की उँगली) से मिलायें। सिर, गर्दन और रीढ़ की हड्डी सीधी रेखा में रहें। आँखें और होंठ सहज रूप से बंद करें। मनःचक्षुओं के आगे अपने इष्टदेव की प्रतिमा को लायें। मन को संकल्प-विकल्प रहित रखने का प्रयत्न करें।

लाभ : (१) इस मुद्रा के अभ्यास से स्नायुमंडल को बल मिलता है।

(२) शारीरिक व मानसिक तनाव दूर करने में मदद मिलती है।

(३) मानसिक शांति प्राप्त होने से चंचल मन एकाग्र होता है।

विशेष : योग-साधना करनेवालों के लिए यह मुद्रा बहुत लाभदायी है।

जलोदरनाशक मुद्रा

विधि : कनिष्ठिका (छोटी उँगली) के अग्रभाग को अँगूठे के नीचे की गद्दी से स्पर्श करायें और अँगूठे से इस उँगली पर थोड़ा-सा दबाव दें। अन्य उँगलियाँ सीधी रहें। (आकृति में दिखाये अनुसार)

लाभ : (१) शरीर में जल तत्त्व का प्रमाण कम करने में यह मुद्रा मदद करती है।

(२) शरीर में जल तत्त्व का प्रमाण बढ़ने से उत्पन्न हुई जलोदर जैसी बीमारियाँ इस मुद्रा के नियमित अभ्यास से ठीक होती हैं।

विशेष : रोग पूर्ण रूप से ठीक होने तक इस मुद्रा का अभ्यास चालू रखें।

ग्रीष्म-ऋतुचर्या

काल : अप्रैल, मई माह और जून माह के प्रारंभिक दिन

शारीरिक-स्थिति	आहार (पथ्यकर)	त्याज्य वस्तुएँ	विशेष
* कफदोष स्वाभाविक ही शांत हो जाता है। * वातदोष धीरे-धीरे बढ़ने लगता है। * बाह्य ताप तथा रुक्ष हवा से शारीरिक स्निग्धता व जलीय अंश कम होने लगता है, जिससे थकान आती है। * जठराग्नि मंद हो जाती है। * शारीरिक बल घटने लगता है।	* मधुर, तरल, सुपाच्य, हलका, जलीय, ताजा, स्निग्ध व शीत गुणयुक्त। * मात्रा :- अल्प। * गेहूँ, चावल, सत्तू, दूध व घी विशेष पथ्यकर। * सब्जियाँ :- लौकी, पेठा, गिल्की, परवल, करेला, चौलाई, पालक, धनिया, पुदीना, ककड़ी, नींबू। * फल :- अंगूर, खरबूजा, नारियल, अनार, केला, आम।	* नमकीन, खट्टा, रूखा, तला, मिर्च-मसालेदार। * दही, अमचूर, अचार, इमली, आलू, बैंगन, मटर, चना, टमाटर, गोभी, भिंडी आदि पचने में भारी व वायु करनेवाली सब्जियाँ। * गरम मसाला, हरी अथवा लाल मिर्च व अदरक का अधिक उपयोग न करें। * ग्रीष्म ऋतु में छाछ त्याज्य है। अगर छाछ का सेवन करना हीहो तो ताजी, मीठी छाछ में जीरा, सौंफ, मिश्री मिलाकर सेवन करें।	**हितकर** * पानी-प्रयोग। * प्रातः खुली हवा में टहलना। * योगासन। * मुलतानी मिट्टी से स्नान। * रसायन चूर्ण का पानी के साथ सेवन। * प्रातः हरड़ चूर्ण का गुड़ के साथ सेवन। **अहितकर** * अधिक उपवास। * अधिक व्यायाम। * रात्रि-जागरण।

छोटी बातें - बड़े लाभ

ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की प्रखर किरणों से जिस प्रकार जलाशय सूखने लगते हैं, उसी प्रकार प्राणियों के शरीर का जलीय अंश भी घटने लगता है। इस बदलते वातावरण से शरीर की रक्षा करने के लिए और जलीय अंश का संतुलन बनाये रखने के लिए ग्रीष्मकाल में आहार तथा विहार में कुछ परिवर्तन करना अवश्यंभावी है।

गर्मियों में बाहर जाने से पहले एक गिलास पानी पीकर ही निकलें। इससे लू लगने की सम्भावना कम हो जाती है। इन दिनों प्रातः 'पानी-प्रयोग' करने से भी बहुत लाभ होता है।

रात्रि-जागरण गर्मियों में सर्वथा निषिद्ध है। इससे पित्त बढ़ने लगता है। अगर किसी कारण से देर रात तक जगना ही पड़े तो हर एक घंटे बाद जल पीते रहना चाहिए।

बाहर के उष्णता भरे वातावरण में से आकर तुरंत पानी पीना और हाथ-पैर तथा सिर को ठंडे पानी से धोना अनुचित है। पहले कुछ देर विश्राम करें और पसीना सूखने एवं शरीर ठंडा होने पर ही पानी पीयें।

धूप में खुले सिर घूमने से जीवनशक्ति का ह्रास होता है। सिर पर टोपी या कपड़ा अवश्य रखें।

गर्मी के दिनों में सुबह जल्दी उठकर सूर्योदय से पहले खुली हवा में टहलना मन को प्रफुल्लित व शरीर को तरोताजा बनाता है।

ग्रीष्मकाल में ग्रहणीय पदार्थों में दूध व चावल की खीर, ताजे फलों का रस, शिकंजी, शरबत, ठंडाई आदि द्रवरूप, स्निग्ध व मधुर पदार्थों का सेवन बल व तृप्तिदायक है। इन दिनों में भूना हुआ आम, इमली, कोकम आदि का गुड़ व जीरा मिलाकर बनाया गया शरबत ऋतुजन्य विकारों से रक्षा करने में सक्षम है। अन्य दिनों में निषिद्ध दही से बना हुआ श्रीखंड का सेवन इन दिनों में किया जा सकता है।

[धन्वंतरि आरोग्य केन्द्र, अमदावाद आश्रम]

अमदावाद आश्रम : २० से २२ मार्च तक इस पुण्यस्थली पर पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में चेटीचंड महोत्सव व ध्यान योग साधना शिविर सम्पन्न हुआ। ज्ञान, भक्ति व योग मार्ग में प्रतिष्ठित गुरुदेवश्री की उपस्थिति व दर्शनमात्र से विशाल सत्संग-भवन में उपस्थित मानवमेदिनी आनंदित हो उठी। भगवान शिवजी के वचनों का प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा था :

यस्य दर्शनमात्रेण मनसः स्यात् प्रसन्नता।
स्वयं भूयात् धृतिश्शांतिः स भवेत् परमो गुरुः ॥

कभी ध्यान के गहरे प्रयोग, कभी भगवन्नाम कीर्तन, कभी आत्मा-परमात्मा पर गम्भीर प्रवचन, कभी मधुर हास्य-विनोद, कभी निकट से दर्शन की लालसा लिये भक्तों ने लगायीं लम्बी कतारें तो कभी स्वयं पूज्य गुरुदेवश्री ही व्यासपीठ से उतरकर पहुँचे भक्तों के बीच !

पूज्यश्री की भक्तवत्सलता, करुणा-कृपा और भक्तों की दर्शन-सत्संग की लालसा एवं श्रद्धा का मिलाप होते ही बरसती है पुण्यमयी सत्संग वर्षा और निहाल होते हैं प्रभु के प्यारे, संतों के दुलारे।

हृदय के अंतरतम प्रदेशों में यात्रा कराते हुए तथा ध्यान की गहराइयों में ले जाते हुए योगनिष्ठ गुरुदेवश्री ने अपनी अनुभव-सम्पन्न वाणी में कहा : ''जीव अंतर्मुख होने की कला नहीं जानता इसीलिए मान-अपमान, सुख-दुःख, सफलता-विफलता के थपेड़े खाता रहता है। यदि वह भीतर आने की कला जान ले, अंतर्मुख होना सीख ले तो उसके सारे दुःख मिट जायें।

भगवान के नाम में भगवदीय शक्तियाँ, भगवदीय सत्ता, भगवदीय प्रेरणा, भगवदीय सुख और भगवदीय सामर्थ्य है।

भगवन्नाम एक पुकार है। सांसारिक कष्टों के निवारण का उपाय है - भगवन्नाम का आश्रय लेना और भगवत्प्राप्ति का पुरुषार्थ बढ़ाना।

हरति पातकानि दुःखानि शोकानि इति श्रीहरिः।

केवल भगवान में ही विश्वास, केवल भगवान की ही आवश्यकता और केवल भगवान में ही प्रीति करनेवाले को ईश्वरप्राप्ति शीघ्र हो जाती है।''

जयपुर (राज.) : यहाँ २७ से ३० मार्च तक राजभवन (राज.) द्वारा आयोजित पूज्यश्री का सत्संग-कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। गरीबों के सहायतार्थ आयोजित इस ४ दिवसीय ज्ञानयज्ञ से एकत्रित राशि को 'मुख्यमंत्री सहायता कोष' में जमा कराये जाने की योजना बनायी गयी, जिसका उपयोग राज्यपाल द्वारा गरीबों की सहायता के लिए किया जायेगा।

२५ मार्च को यहाँ शोभायात्रा निकाली गयी। इसमें सजे-धजे हाथी-घोड़ों, बग्घियों के साथ बैंडवादकों द्वारा बजायी जा रही आध्यात्मिक धुनों पर भक्तजन मस्त होकर नाच रहे थे। शोभायात्रा में 'ज्योत से ज्योत जगाओ सद्गुरु, ज्योत से ज्योत जगाओ..., मधुर मधुर नाम हरि हरि ॐ... और नारायण नारायण...' के कीर्तनानंद से वातावरण में अध्यात्म-रस छिटक रहा था।

२७ मार्च को राजभवन में उमड़ी गरीब और निराश्रित लोगों की भीड़ पूज्यश्री के करकमलों से अन्न, धन, औषधियाँ, वस्त्रादि प्राप्त कर खुशी से झूम उठी। पूज्यश्री ने नकद राशि के साथ सामग्री के रूप में गेहूँ, चावल, बर्तन, कम्बल तथा अन्य सामग्री भी प्रदान की। हर कोई स्वयं पूज्य बापूजी के करकमलों से मदद पाने को लालायित था।

महामहिम राज्यपाल श्री मदनलाल खुराना और पूज्य बापूजी ने शनिवार को यहाँ राजभवन के 'गरीब सुनवाई केन्द्र' पर करीब ३००० गरीबों को १० लाख रुपये की खाद्य सामग्री, वस्त्र, बर्तन तथा एक लाख रुपये की नकद सहायता-राशि प्रदान की।

राज्यपाल ने गरीबी रेखा से नीचे के प्रत्येक

व्यक्ति को मकान-निर्माण के लिए २५०० रुपये की प्रथम किश्त प्रदान की।

गरीबी रेखा से नीचे के लोगों को दिये गये पैकेटों में एक किलो तेल, एक किलो चीनी, एक किलो दाल, आठ किलो आटा या दस किलो गेहूँ, धोती-कुर्ता, साड़ी-ब्लाउज एवं बच्चों के कपड़े, साबुन, चूर्ण, स्टील का टिफिन, प्रसादी और नकद राशि प्रदान की गयी। इस अवसर पर राज्यपाल खुराना ने कहा कि ''गरीबों की सेवा 'नारायण' की सेवा है। दुःखी-पीड़ित व्यक्तियों की मदद के लिए लोगों को तत्पर रहना चाहिए। गरीबों की सेवा पुण्यदायी कार्य है। इसमें भागीदार बनकर लोगों को अपने कर्तव्यों का निःस्वार्थ भाव से निर्वाह करना चाहिए।''

कार्यक्रम में पूज्यश्री ने भारतीय संस्कृति को सुंदर बताते हुए कहा कि ''लोगों को अपनी सोच का नजरिया सकारात्मक रखना चाहिए, ताकि समाज निरंतर प्रगतिशील बना रहे।''

उन्होंने राजभवन के 'गरीब सुनवाई केन्द्र' पर गरीबों की वर्षभर तक मदद करने के लिए ५० लाख रुपये देने की घोषणा की। उन्होंने कहा कि राज्यपाल खुराना का गरीबों की मदद का कार्य अभूतपूर्व है और उन्होंने राज्यपाल के इन पुनीत कार्यों से प्रेरित होकर ही गरीबों की मदद के लिए 'गरीब सुनवाई केन्द्र' के लिए राशि देने का निर्णय लिया है।

उल्लेखनीय है कि राजभवन में आयोजित 'विशेष गरीब सुनवाई कार्यक्रम' में दी गयी सहायता-राशि एवं अन्य सामग्री 'संत श्री आसारामजी आश्रम' की ओर से प्रदान की गयी। गरीबों के सहायतार्थ यहाँ सत्संग-प्रवचन के लिए आये पूज्यश्री ने 'हरि ॐ... हरि ॐ...' का उच्चारण कराया। पूज्यश्री ने कहा कि ''अमीर के प्रति ईर्ष्या तथा गरीब के प्रति लाचारी नहीं होनी चाहिए। कोई भी राज्यपाल, मंत्री या साधु किसीकी गरीबी दूर नहीं कर सकता। यह तो तभी दूर हो सकती है जब गरीब स्वयं अपने मन से इस बात को निकाल दे कि वह गरीब है।''

इस अवसर पर पूज्यश्री ने ५०० परिवारों को हर माह खाद्य सामग्री देने की घोषणा भी की। पूज्यश्री ने हिन्दुओं के जीर्ण-शीर्ण मंदिरों की दशा सुधारने की आवश्यकता व्यक्त करते हुए कहा कि ''जिन मंदिरों में चढ़ावा ज्यादा आता है उन्हें सरकार ले लेती है, शेष मंदिरों की देखभाल कोई नहीं करता।''

इससे पहले राज्यपाल ने कहा कि ''धर्म राजनीति से ऊपर हो तभी राजनीति पर अंकुश लगेगा।'' उन्होंने बताया कि वे अपने वेतन की आधी राशि गरीबों में बाँटेंगे।

उल्लेखनीय है कि गरीबों की सहायता के लिए आयोजित इस कार्यक्रम के अंतर्गत बीमारों एवं अपंगों के स्वास्थ्य की भी जाँच की गयी। पूज्य बापूजी ने गरीबों की सहायतार्थ एकत्र हुई राशि 'मुख्यमंत्री सहायता कोष' में जमा करायी।

सिंहस्थ कुंभ महोत्सव, उज्जैन : ५ से १० अप्रैल, १८ से २५ अप्रैल और २ से ४ मई तक ध्यान योग शिविरों का आयोजन हुआ। २३ अप्रैल को 'अखाड़ा परिषद' के संत आये और पूज्यश्री को आमंत्रित कर अपने साथ ले गये। पूज्य बापूजी के आगमन से अखाड़े के साधु-संतों में हर्ष की लहर देखी गयी।

१२ और १३ अप्रैल को क्रमशः गुरान और कायथा (म.प्र.) में पूज्यश्री के पावन सान्निध्य व प्रेरक मार्गदर्शन में भंडारा संपन्न हुआ। गरीबों, आदिवासियों ने भरपेट भोजन के साथ पाया मिठाई, दक्षिणा और सत्संग भी।

यहाँ आश्रम के साधकों ने गरीब-गुरबों के घर-घर जाकर उन्हें मिठाई के साथ नकद सहायता भी प्रदान की। पंचक्रोशी यात्रियों को आश्रम द्वारा फल बाँटे गये। १ अप्रैल को राजस्थान के राज्यपाल श्री मदनलाल खुराना आश्रम के साधकों के साथ फल-वितरण में स्वयं संलग्न रहे। १०,००० कि.ग्रा. अंगूर, ८००० कि.ग्रा. चीकू, ३००० कि.ग्रा. ककड़ी वितरित की गयी।

विविध अखबारों ने पूज्यश्री के अमृत वचनों को प्रकाशित किया, जिनके कुछ अंश यहाँ दिये जा रहे हैं :

अखबारों के झरोखे से...

दैनिक भास्कर

इंदौर, ९ अप्रैल, २००४

कुंभ मेला नहीं, पर्व है : आसारामजी बापू

उज्जैन, ८ अप्रैल। संत श्री आसारामजी बापू ने कहा कुंभ को मेला कहना गलत है। यह अमावस्या, पूर्णिमा की तरह ही एक पर्व है जिससे तन और मन को लाभ मिलता है।

सिंहस्थ के दौरान आयोजित शिविर में श्रद्धालुओं को आशीर्वचन देते हुए उन्होंने कहा संसार में रचनात्मक व विनाशकारी - दो तत्त्व हैं। विज्ञान में यह ऑक्सीजन व कार्बन-डाई-ऑक्साइड के रूप में व पृथ्वी पर ग्रह-नक्षत्रों के प्रभावों से जीवन-अनुकूल व जीवन-विरोधक गतिविधियाँ हैं। ये तत्त्व देवों और दानवों के नुमाइंदे हैं। वैज्ञानिकों ने कौन-सी गतिविधि किस समय होगी इसका अंदाजा ज्योतिष शास्त्र के आधार पर लगाया है। विशेष स्थानों पर विशेष कर्म करने की परंपरा चली आ रही है। इन कर्मों को करने का समय पर्व कहलाता है। विशिष्ट कर्म का स्थान तीर्थ माना जाता है। मेले में केवल मनोरंजन होता है। कुंभ में तप और साधना होती है।

नव भारत

इंदौर, ९ अप्रैल, २००४

सच्चे गुरु की तलाश खत्म हो जाती है बापू के सामने

(उज्जैन कार्यालय)

उज्जैन, ८ अप्रैल। सच्चे गुरु की तलाश में भटकते लोग जब बापू की शरण में आते हैं तो उनकी तलाश समाप्त हो जाती है। कई विलक्षण और अद्भुत अनुभूतियाँ हुई हैं उनके शिष्यों को, जिन्हें वे बयान नहीं कर सकते हैं, केवल महसूस ही करते हैं।

शिष्य बताते हैं कि बापू का रूहानी एहसास हमें चौबीसों घंटे होता रहता है। बापू की वाणी और ममतामयी दृष्टि ने हमारे जीवन को नई दिशा दी है। उज्जैन सिंहस्थ में पधारे पूज्य आसारामजी बापू का शिविर चिंतामण गणेश रोड पर चल रहा है। ध्यानयोग और सत्संग के विभिन्न कार्यक्रमों में २५ हजार शिविरार्थियों के साथ दूरदराज से आये श्रद्धालु बापू के प्रवचनों को अपने जीवन का सार मानते हैं। वे कहते हैं कि जीवन पथ पर चलते हुए की गयी गलतियों के लिए बापू सत्संग के दौरान जितनी कड़ी फटकार लगाते हैं, अगले ही पल उतने ही प्यार से गलती दुबारा न दोहराने की समझ देकर पुचकार भी लेते हैं। श्रद्धालु बापू में ही रम जाना चाहते हैं। उन्हें बस उठते-बैठते, सोते-जागते एक ही नाम सूझता है और वह है - बापू।

अवर्णनीय है बापू का सान्निध्य

संसार में ऐसे उत्कृष्ट पुरुषों की संख्या अति अल्प है और है भी किन्हीं पवित्र जगहों पर, सर्वत्र नहीं। तथापि संसार ऐसे महापुरुषों से सर्वथा शून्य नहीं है। वे मानव जीवन के सुन्दरतम सुरभियुक्त फूल हैं और अहैतुक असीम दया के सागर हैं। भगवान श्रीकृष्ण भागवत में कहते हैं : ''मुझे ही आचार्य जानो।''

ऐसे सत्तत्त्व का बोध करानेवाले, अहैतुकी कृपा बरसानेवाले आचार्यों के रूप में, गुरुओं के रूप में भगवान स्वयं ही अवनि पर अवतरित होते हैं।

नव भारत इंदौर, २४ अप्रैल, २००४

जिन्हें मृत्यु का विचार आये वे करें महामृत्युंजय जाप

निज प्रतिनिधि

उज्जैन, २३ अप्रैल । आत्मवेत्ता संत श्री आसारामजी बापू ने अपने ध्यान योग शिविर में प्राणायाम, मंत्र विद्या एवं ध्यानयोग के प्रयोग कराये और कहा कि महामृत्युंजय के जप से अशांति, बेचैनी, अकाल मृत्यु का निवारण होता है। जिन्हें मृत्यु के विचार आते हों, उन्हें इसका जप अवश्य करना चाहिए।

आसारामजी उवाच

अनुलोम-विलोम जप से चित्त की बेचैनी दूर होती है। गीतामर्मज्ञ संत श्री आसारामजी बापू ने कर्मयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग और ध्यानयोग के मार्ग से साधना करनेवाले साधकों को समन्वित मार्गदर्शन दिया । संतशिरोमणि ने कहा कि १२ वर्ष की मनमानी साधना १२ हफ्ते की इस साधना के सामने कोई मायना नहीं रखती । हम जब मंत्रदीक्षा देते हैं, तब सिद्धयोग का प्रयोग करते हैं। इससे दीक्षार्थियों के शरीर में आवश्यक यौगिक क्रियाएँ अपने आप होने लगती हैं, प्राणशक्ति और आत्मिक शक्ति के इस प्रयोग के आगे दुनिया के सारे चमत्कार बौने-नन्हे सिद्ध होते हैं।

योगनिष्ठ एवं कुंडलिनी योग के ज्ञाता बापू ने गीता व श्रीमद्भागवत के ज्ञानामृत का सिंचन किया। ढाई लाख स्त्री-पुरुष, अबाल-वृद्ध मंत्रमुग्ध होकर संतश्री को एकटक देख रहे थे और आंतरिक आनंद की अनुभूति से रसीले हो रहे थे । संतश्री ने शांति का मार्ग दिखाते हुए कहा कि अशांत व्यक्ति को सुख कहाँ ? और शांत व्यक्ति को दुःख कहाँ ? भुवनों के आकर्षण को भंग करने के कारण भुवन भयहारी कहलानेवाले महाकाल की वंदना की गयी । बापू की आत्मस्पर्शी प्रार्थना-वंदना से समस्त मंडप में शांति-निस्तब्धता छा गयी। वातावरण आध्यात्मिकता से ओतप्रोत हो गया । आत्मरस की माँग सभीकी है। यह बाहरी वस्तुओं से नहीं, ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों के पास ही मिल सकता है। कर्फ्यू, डंडे, बंदूक एवं प्रलोभन से समाज नहीं सुधरता, परमात्म-सुख का स्वाद सबको सद्बुद्धि दे देता है। संतश्री ने राजविद्या का राज बताते हुए कहा कि इस साधना व विद्या के आगे कोहिनूर भी तुच्छ है।

संतश्री का प्रत्यक्ष दर्शन कर भक्तजन अभिभूत हो उठे, जयजयकार करने लगे। तब संतश्री ने कहा कि हमारी जय मत करो, सच्चा सुख पा लो।

भारत सेवा आश्रम संघ के स्वामी बुधानंद संत श्री बापू के दर्शनार्थ चिंतामण रोड स्थित संत श्री आसारामजी नगर पधारे। भारतीय संस्कृति की एकता व अखंडता के विषय में दोनों संतों की चर्चा मंच पर हुई । हमारी सनातन वैदिक संस्कृति, हमारे श्रेष्ठ हिन्दू धर्म व हमारे स्वर्णिम इतिहास पर दोषारोपण कर हमारे नौजवानों को, हमारे देश के भोले-भाले आदिवासी हिन्दुओं को धूर्त, मिथ्यावादी व षड्यंत्रकारी लोग सेवा का नाटक कर धर्मांतरित कर रहे हैं, उन्हें ईसाई बना रहे हैं। हमारे ही पैसों से हमारे हिन्दू धर्म को नष्ट करना चाहते हैं, हमारे लोगों को हमारा ही दुश्मन बना रहे हैं । वे अपना वोट बैंक बढ़ाकर हमको फिर एक बार गुलाम बनाना चाहते हैं।

सभी ऋतुओं में दिन में सोना निषिद्ध है किंतु बालक, वृद्ध, क्षत-क्षीण रोगी, शराबी, यान-वाहन-यात्रा या परिश्रम करने से थके हुए, भोजन न करनेवाले, मेद, स्वेद, कफ, रस, रक्त से क्षीण हुए और अजीर्ण के रोगी मुहूर्तभर (४८ मिनट) के लिए दिन में सो सकते हैं । जिन्होंने रात में जागरण किया हो, वे भी रात्रि-जागरण के आधे समय तक दिन में सो सकते हैं ।

(सुश्रुत संहिता)

नईदुनिया इंदौर, २६ अप्रैल, २००४

मस्ती उनका मंत्र है और खुशी उनकी खिदमत !

(उज्जैन कार्यालय)

यह तो कहना होगा कि आसारामजी का जादू चलता है ! सिंहस्थ में उन्हींके शिविर में सबसे ज्यादा श्रद्धालु उमड़ते हैं । वे श्रद्धालुओं को खासा इतजार भी करवाते हैं, मगर न जाने क्या बात है, जो इंतजार की घड़ियों को भी खुशनुमा बनाये रखती है । वे शिविर-स्थल के आसपास होते हैं और भक्त उन्हें सूँघ लेते हैं । रीढ़ सीधी हो जाती है और आँखों में आस्था उमड़ आती है । उन्होंने अपने भक्तों को दीवाना बना रखा है । तो क्या भक्तों को वश में कर लेने का कोई मंत्र उनके पास है ?

स्वयं आसारामजी के शब्दों में : 'हाँ, मेरे पास वशीकरण विद्या है । वशीकरण का मेरा मंत्र यह है कि मैं सबसे खुले दिल से प्रेम करता हूँ और प्रेम करना सिखाता हूँ । मैं लोगों को मन को प्रसन्न रखने के सूत्र देता हूँ और स्वस्थ रहने के प्रयोग सिखाता हूँ !' इसलिए वे प्रवचन करते हुए भक्तों को गुदगुदाते हैं, उनको मस्ती के आलम में ले जाते हैं ।

एक लाख भक्तों की भीड़ को वे इतनी सहजता से संबोधित करते हैं कि अच्छे-खासे संतों-महंतों और प्रवचनकारों को पसीना छूट जाय । भक्त उनके एक इशारे पर झूम जाते हैं और दूसरे पर नाचने लगते हैं । मस्ती उनका मंत्र है और खुशी उनकी खिदमत !

अब इसके लिए तो आसारामजी को दोष नहीं दिया जा सकता है कि लोग उनके यहाँ क्यों ज्यादा आते हैं ! सच कहो तो आसारामजी भक्तों की भक्ति और श्रद्धालुओं की श्रद्धा चुराते हैं । वे आस्था को आसमान दिखाते हैं और विश्वास को विहंगम बनाते हैं ।

...और आसारामजी की खासियत है कि वे सतत मधुर मुस्कान बिखेरे जाते हैं । उनके होंठ कभी थकते नहीं ।

दैनिक भास्कर इंदौर, २२ अप्रैल, २००४

वशीकरण मंत्र की तरह है प्रेम - बापू

उज्जैन, २१ अप्रैल । प्रेम वशीकरण मंत्र की तरह है । वह देना जानता है जबकि अहंकार लेना । आत्मतीर्थ में स्नान करानेवाले संत की खोज में लोग तीर्थों में जाते हैं । ऐसे में कोई संत मिल जायें तो वे अपने को कृतार्थ अनुभव करते हैं । यह बात संत आसारामजी बापू ने चिंतामण रोड स्थित अपने शिविर में श्रद्धालुओं को दिये प्रवचन में कही । जिस भी स्थिति में रहो भजन करना शुरू कर दो । ईश्वर की ताकत नहीं कि वह आपका त्याग कर सके । हिन्दू धर्म के समान पूर्ण और महान वैज्ञानिक धर्म कोई नहीं है । शत्रु से बदला लेने का उपाय उसके बताये दोषों को दूर करने में है ।

[*हजारों लोग भाग ले रहे हैं ध्यान योग शिविर में*]

ध्यान योग शिविर में ३८ हजार से अधिक लोग भाग ले रहे हैं । बापू द्वारा बताये गये ध्यान योग के गहरे प्रयोग करने पर शिविरार्थियों को ध्यान के दौरान शांति का अनुभव हुअ । शिविर में बाल संस्कार, आयुर्वेद आदि विषयों पर प्रदर्शनी भी लगायी गयी है ।

दैनिक भास्कर

इंदौर, २६ अप्रैल, २००४

सांसारिक वासनाओं ने मानव को दीन-हीन बना दिया है

उज्जैन, २५ अप्रैल।

संत आसारामजी बापू ने कहा मनुष्य इतना ऊपर उठ सकता है जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती। सांसारिक इच्छाओं और वासनाओं ने मानव को दीन-हीन बना दिया है। साधना के साथ ही आगे के मार्ग खुलते जाते हैं। उपास्य के अनुरूप अपना चित्त बना लेना ही उपासना का फल होता है।

आसारामजी ने कहा

शनिवार को आर.एस.एस. के सरसंघचालक के.सी. सुदर्शन ने माल्यार्पण कर बापू का आशीर्वाद प्राप्त किया। साध्वी ऋतंभरा ने भी शिविर में पहुँचकर बापू के दर्शन किये। संत आसारामजी नगर (चिंतामण रोड) में आठ दिवसीय ध्यान योग शिविर के समापन अवसर पर श्रद्धालुओं को आशीर्वचन देते हुए बापू ने कहा आत्मज्ञान को पाना ही प्रत्येक मानव का लक्ष्य है। बाह्य तीर्थ में धर्मलाभ होता है, लेकिन वहाँ यदि कोई संत मिल जायें तो चारों पुरुषार्थों का लाभ होता है और ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु के मिलने पर अनंत फल प्राप्त होता है। चिंतन से प्रेरणा मिलती है, सांसारिक वस्तुएँ नहीं मिलती। सांसारिक वस्तुओं को पाने के लिए उद्यम व प्रारब्ध भी चाहिए। भगवान चिंतन करने से मिल सकते हैं। संत श्री आसारामजी नगर के व्यवस्थापकों ने बताया कि बापू के सान्निध्य में दो चरणों में हुए शिविर के दौरान करीब २५ लाख लोगों ने उनके प्रवचनों का लाभ लिया। यहाँ हजारों साधकों की कुंडलिनी जागृत हुई।

नव भारत

इंदौर, २६ अप्रैल, २००४

विश्वभर में २०६ शाखाएँ हैं संत श्री बापू की

उज्जैन, २५ अप्रैल। संत आसारामजी बापू अहमदाबाद में साबरमती तट पर मोटेरा में पधारे। उस समय वहाँ दिन में भी भयानक मारपीट, लूटपाट, डकैती व असामाजिक कार्य होते थे। वही मोटेरा गाँव आज विश्व के करोड़ों श्रद्धालुओं का पावन तीर्थधाम बन चुका है। यहाँ प्रवेश करते ही श्रद्धालुओं को एक दिव्य शांति की अनुभूति होने लगती है। दुःख, चिन्ताएँ उस समय न जाने कहाँ छूमंतर हो जाती हैं। आज पूरे विश्व में इस आश्रमरूपी विशाल वटवृक्ष की २०६ शाखाएँ स्थापित हो चुकी हैं। यहाँ संतश्री के करकमलों से लगाये गये एवं शक्तिपात किये हुए वटवृक्ष की परिक्रमा करने से लोगों की मनोकामनाएँ पूरी होती हैं। अहमदाबाद, दिल्ली, सूरत, इंदौर, लुधियाना आदि आश्रमों में हर रविवार व गुरुवार को हजारों लोगों की भीड़ जुटती है। यहाँ सभी वर्ण, जाति व सम्प्रदायों के लोग देश-विदेश से आकर आत्मानंद में डुबकी लगाते हैं। वनराज सिंह के समान सिंहस्थ राज में सिंह रहे पूज्यपाद बापूजी, पूरे सिंहस्थ में सबसे अधिक भीड़ के कारण लोगों, साधु-संतों व प्रशासन के बीच चर्चा के विषय रहे, सम्पूर्ण सिंहस्थ में छाये रहे।

कई लोग लाभान्वित

८ दिवसीय ध्यान योग शिविर का दूसरा चरण आज संपन्न हुआ। आज सवेरे ६ से ८ बजे के मध्य २५,००० भक्तों ने मंत्रदीक्षा प्राप्त कर आध्यात्मिक जीवन के मार्ग का सूत्रपात किया। गत दिवस शाम राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वर्तमान सरसंघचालक के.सी. सुदर्शन ने पूज्यपाद बापूजी के दर्शन-सत्संग का लाभ लिया। माल्यार्पण कर आशीर्वाद प्राप्त किया। आज प्रातःकालीन सत्र में साध्वी ऋतंभरा देवी पूज्यपाद योगिराज पूज्य बापूजी के दर्शन करने पहुँची। उन्होंने माल्यार्पण कर सद्गुरुदेव से आशीर्वाद प्राप्त किया।

नईदुनिया

इंदौर, २१ अप्रैल, २००४

प्रेम देना जानता है और अहंकार सिर्फ लेना : आसारामजी

(उज्जैन कार्यालय)

उज्जैन, २० अप्रैल। संत श्री आसारामजी बापू ने कहा है कि मेरे पास वशीकरण मंत्र है। यह सुनकर लोगों के कान खड़े हो गये। उन्होंने रहस्योद्घाटन करते हुए कहा कि वह वशीकरण मंत्र प्रेम का है। प्रेम देना जानता है जबकि अहंकार लेना जानता है।

वे अपने चिंतामण मार्ग स्थित शिविर में धर्मसभा को संबोधित कर रहे थे। उन्होंने कहा कि ईश्वर की शक्ति नहीं है कि वे भक्त का त्याग कर सकें। भक्त को ईश्वर के गले पड़ जाना चाहिए तो वे भक्त से मिले बिना नहीं रह सकेंगे। आप जिस किसी भी स्थिति में हों, भजन करना प्रारंभ कर दो, शेष सब बढ़िया हो जायेगा। संतश्री विश्व-क्षितिज पर भारत को चमकते हुए सूर्य की उपमा देते हुए डॉ. एनी बेसेंट के शब्द दोहराते हुए बोले मैंने ८० वर्ष तक विश्व के बड़े धर्मों का अध्ययन करके पाया कि हिन्दू धर्म के समान पूर्ण, महान और वैज्ञानिक धर्म कोई नहीं है। संतश्री ने रात्रि में आनेवाले स्वप्न की चर्चा करते हुए कहा कि यदि रात्रि में शुभ स्वप्न आये तो नींद खुलने के बाद उठ जाना चाहिए और बुरा स्वप्न आने पर नींद खुले तो फिर सो जाना चाहिए। इससे बुरे स्वप्न का प्रभाव क्षीण हो जाता है।

उनके शिविर में आठ दिन तक चलनेवाले ध्यान योग शिविर में ३८ हजार ९२० शिविरार्थी ध्यान योग का अनुपम लाभ उठा रहे हैं। संतश्री के शिविर में बाल संस्कार, आयुर्वेद एवं अन्य विभिन्न विषयों को लेकर एक विशाल प्रदर्शनी लगायी गयी है। यहाँ लगभग डेढ़ लाख जनता प्रवचन एवं सत्संग का लाभ ले रही है।

नईदुनिया

आठ दिवसीय ध्यान योग साधना शिविर का समापन

इंदौर, २६ अप्रैल, २००४

उज्जैन, २५ अप्रैल। संत आसाराम नगर में संत श्री आसारामजी बापू के सान्निध्य में ध्यान योग साधना शिविर संपन्न हुआ। बापूप्रेमी लाखों श्रद्धालु सत्संग ज्ञानामृत में डुबकी लगा रहे हैं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक श्री के.सी. सुदर्शन ने संतश्री के दर्शन किये।

संत आसारामजी नगर के प्रचार-प्रसार विभाग के अनुसार सिंहस्थ में आसारामजी नगर में लाखों श्रद्धालुओं-सत्संगियों ने बापू के ज्ञानामृत-वचनों का लाभ लिया। इंदौर, अहमदाबाद, सूरत, दिल्ली, लुधियाना, पंजाब, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र से लाखों श्रद्धालु प्रतिदिन बापूश्री के दर्शन करने आ रहे हैं। १८ से २५ अप्रैल तक आयोजित शक्तिपात साधना शिविर में १६ लाख से अधिक लोग संतश्री की आत्मानुभव-संपन्न वाणी से लाभान्वित हुए। शक्तिपात साधना के आचार्य बापू ने अपने सिद्धयोग के प्रभाव से हजारों साधकों की कुंडलिनी जागृत की। लाखों को ध्यानयोग के गहरे अनुभव हुए। विगत दिवस सुबह ६ से ८ बजे के मध्य २५ हजार भक्तों ने मंत्रदीक्षा प्राप्त कर आध्यात्मिक जीवन के मार्ग का सूत्रपात किया।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वर्तमान सरसंघचालक श्री के.सी. सुदर्शन व साध्वी ऋतंभरा देवी ने बापू के दर्शन कर आशीर्वाद प्राप्त किया। सरसंघचालक श्री सुदर्शन ने बापू, सनातन धर्म की महिमा एवं स्वधर्मनिष्ठा पर प्रकाश डाला।

** 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका के सभी सेवादारों तथा सदस्यों को सूचित किया जाता है कि 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका की सदस्यता के नवीनीकरण के समय पुराना सदस्यता क्रमांक/रसीद-क्रमांक एवं सदस्यता 'पुरानी' है - ऐसा लिखना अनिवार्य है। जिसकी रसीद में ये नहीं लिखे होंगे, उस सदस्य को नया सदस्य माना जायेगा।*

** नये सदस्यों को सदस्यता के अंतर्गत वर्तमान अंक के अभाव में उसके बदले एक पूर्व प्रकाशित अंक भेजा जायेगा।*

पूज्यश्री से शुभाशीष प्राप्त करते हुए...

...श्री मदनलाल खुराना, राज्यपाल (राज.).

...श्रीमती वसुंधराराजे सिंधिया, मुख्यमंत्री (राज.).

जयपुर (राज.) में गरीब सहायतार्थ पूज्य बापूजी के सत्संग-समारोह का आयोजन हुआ। आश्रम की तरफ से गरीबों में अन्न, वस्त्र, दक्षिणा, प्रसाद आदि वितरित करते हुए करुणासिंधु पूज्यश्री। साथ में हैं महामहिम श्री मदनलाल खुराना।
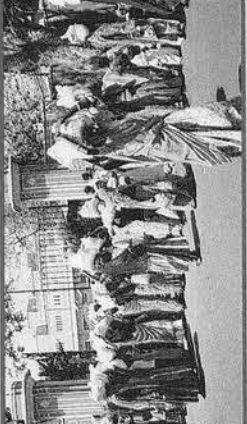
वस्त्र दक्षिणा अन्न-अनाज भर भर ले गये गरीब मोहताज। धन्य धन्य है अवसर आज सत्संग-कीर्तन बजते साज ॥
यह जादू है ब्रह्मनिष्ठ संत पूज्य बापूजी के प्रेम-मंत्र का... जयपुर के सत्संग-समारोह में मस्त लाखों-लाखों भक्तजन।
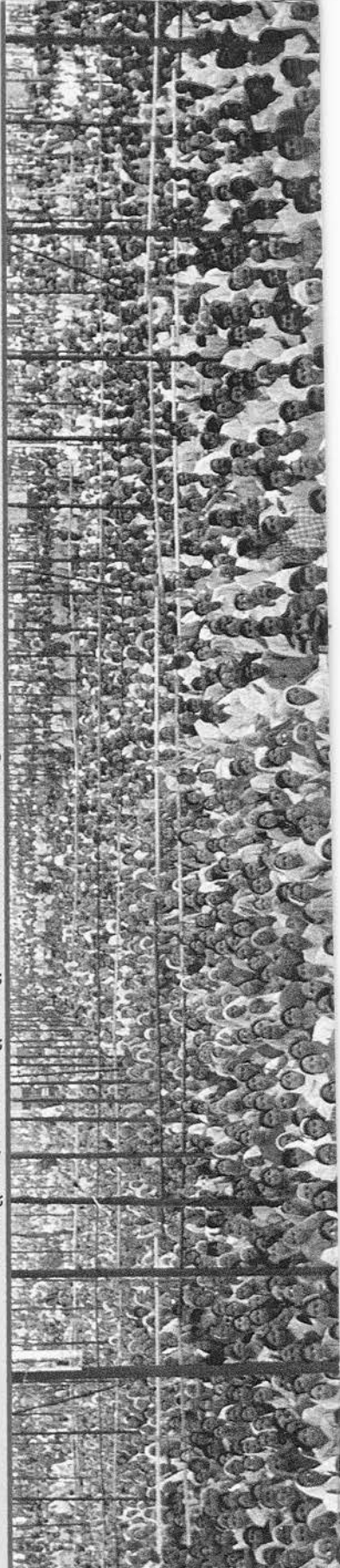
जयपुर (राज.) में पूज्य बापूजी से दीक्षा प्राप्त कर सत्‌शिष्य बनने आये हैं राजस्थान के महामहिम राज्यपाल श्री मदनलाल खुराना।
सत्संग श्रवण करते हुए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक श्री के.सी. सुदर्शन एवं सिंहस्थ प्रभारी मंत्री श्री कैलाश विजयवर्गीय।
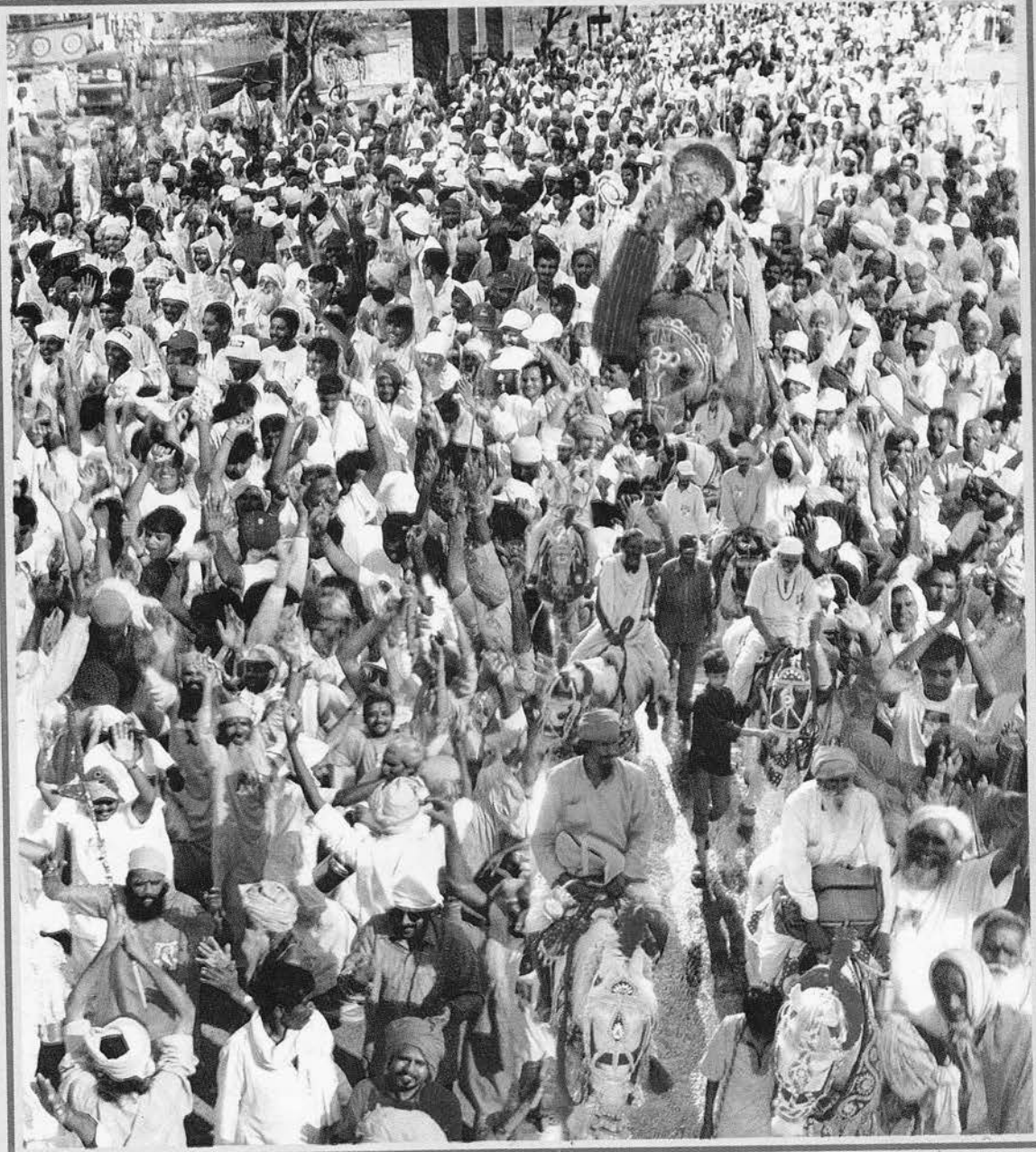
उज्जैन कुंभ में पूज्यश्री के अवतरण दिन पर निकली विशाल संकीर्तन यात्रा
भारत में हो रही दिव्य आध्यात्मिक जागृति को ही दर्शाती है...

R.N.I. NO. 48873/91 POSTAL REGISTRATION. NO. GUJ-1132. LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENSE NO. 207. POSTING FROM AHMEDABAD 2-15 OF EVERY MONTH. ✲ BYCULLA STG. WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO. 236. REGD NO. TECH/47 833/MBI/2003-05 POSTING FROM MUMBAI 9 & 10th OF EVERY MONTH. ✲ FOREIGN POSTING 5 & 6 OF EVERY MONTH FROM AIRPORT PO. - 400099. ✲ DELHI REGD. NO. DL-11513/2003-05 WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO.-U(C) 232/2003-05 POSTING FROM DELHI 10-11 OF EVERY MONTH.